ॐ

श्री भँवर दोहावली

श्री भँवर संकीर्त्तन मण्डल, कोलकाता

ॐ

: श्री भँवर दोहावली :

रचयिता :

महाकवि सन्त श्री भँवर जी जाजड़ा

प्रकाशक :

श्री भँवर संकीर्त्तन मण्डल, कोलकाता

विक्रमी सम्वत् २०६३ भाद्र शुक्ल पक्ष सितम्बर २००६

पुस्तक मिलने का पता :

१. श्री भँवर संकीर्त्तन मण्डल
५६, नेताजी सुभाष रोड
४ तल्ला, कोलकाता - ७०० ००१
दूरभाष - २२४२६२९६

२. गुरुदेव सन्त श्री भँवर जी जाजड़ा
रूप सागर एपार्टमेण्ट
१३२ ए०/३८ जेसोर रोड (४ तल्ला)
नश्कर बगान, कोलकाता - ७५
दूरभाष : २५२२३६८१

मुद्रक :
फ्यूचर
लिलुआ (हावड़ा)

ॐ

मंगल कामना

श्री भँवर संकीर्त्तन मण्डल, कोलकाता द्वारा प्रकाशित यह पुस्तक पाठक-महानुभावों के लिए परम हितकारिणी सिद्ध होगी, ऐसा हमारा विश्वास है। हमारे ऋषि-मुनियों ने कहा है कि

"तरुवर-सरवर-सन्त जन, चौथा बरसे मेह।

परमारथ के कारणे, चारों धारी देह॥"

अर्थात् सन्त-महापुरुषों का जन्म ही परोपकार के लिए होता है। वे अपने लिए नहीं बल्कि दूसरों के लिए जीवित रहते हैं।

कवि अपने युग का प्रतिनिधि होता है, जैसे युग बदलता है वैसे मानवीय मानस भी बदल जाते हैं, दुर्गुण और समस्याओं से समाज ग्रसित हो जाता है और पतन के मार्ग खुल जाते हैं, मनुष्य भ्रमित होकर अपने ही पाँवों पर कुल्हाड़ी मारने लगता है। ऐसे दुःखद काल में महापुरुष गण क्षीर-नीर विवेकी बनकर धरती पर प्रगट होते हैं। वे मार्ग दर्शक बनकर संसार को सुखी बनाने का प्रयास करते हैं। इसी सन्दर्भ में "श्री भँवर दोहावली" नाम की यह पुस्तक सद् प्रेरणा के रुप में आपके पास पहुँची है, जिसका आप भरपूर सदुपयोग करेंगे। यही हमारी मंगल कामना है। पुस्तक के जीवनोपयोगी दोहो को खुद पढ़ें और दूसरों को भी पढ़ावें। सत्संग स्थल और अपने घर परिवार में युक्ति पूर्वक दोहों का प्रयोग करें, ऐसी आपसे हमारी प्रार्थना है।

आपके शुभेच्छु :
मण्डल के सदस्य गण

: गुरु-वाणी :

❁ मनुष्य का जन्म संसार से मुक्ति पाने के लिए होता है, क्योंकि मनुष्य बार-बार जन्म लेकर मर जाता है और अपार कष्ट भोगता है।

❁ संसार में जन्म लेकर आना यह अभिशाप है। परन्तु मृत्यु के बाद लौटकर वापस नहीं आना यह एक वरदान है।

❁ मनुष्य चौरासी लाख जीव योनियों में भटकता है। वह हाहाकार करता हुआ ईश्वर से प्रार्थना करता है कि हे प्रभो! मुझे एक बार मनुष्य बना दो, तब मैं अपने शुभ कर्मों से मुक्ति पाने का प्रयास करूँगा।

❁ मनुष्य योनि मिल जाने पर वह दुबारा भटक कर उसी चौरासी लाख योनियों के महाकष्ट में चला जाता है, यही है उसका दुर्भाग्य।

❁ दया ही धर्म की पहचान है, सत्य ही धर्म का चोला है, तपस्या ही धर्म की गति है और त्याग ही धर्म का प्राण है।

❁ जब तक धर्म है, तभी तक यह संसार है। जिस दिन धर्म नष्ट हो जायेगा, उस दिन यह संसार भी मिट जायेगा।

❁ अपने प्राण देकर भी धर्म की रक्षा करो। जब तक धर्म है, तभी तक मनुष्य की स्थिति है।

❁ धर्म कोई पाखण्ड नहीं है, मनुष्य की बुद्धि में पाखण्ड है। जब वह कुछ नहीं जानता, फिर भी कहता है मैं सब कुछ जानता हूँ।

❁ धर्म दो-चार नहीं होते, धर्म एक ही होता है। सत्य, तप, दान और दया के मिलन को ही धर्म कहते हैं।

❁ जिसने अपना धर्म छोड़ दिया, उस पर विश्वास मत करो। जो धर्म पर अटल है, वही मनुष्य विश्वास करने योग्य है।

❁ पुत्र और पिता का धर्म क्या है? पति एवं पत्नी का धर्म क्या है? मालिक तथा सेवक का धर्म क्या है? और राजा एवं प्रजा का धर्म क्या है? उपरोक्त समस्त धर्म के अलग-अलग अंग हैं, परन्तु धर्म तो एक ही है।

ॐ

हमारा विशेष अनुरोध

हम सभी पाठकों का हार्दिक अभिवादन करते हुए आपसे ऐसी आशा रखते हैं कि इस "भँवर दोहावली" पुस्तक का सदुपयोगात्मक प्रचार करके विश्व को पूज्य महाराज जी के विचारों से अवगत करवावें, इससे खुद लाभ लें और दूसरों को भी लाभान्वित करें। हमारे आदरणीय साधु-सन्तों, विद्वानों, उपदेशकों और प्रवचन कर्त्ताओं से हमारा विशेष अनुरोध है कि वे अपनी विषय सूचि में इन अनमोल दोहों को सम्मलित करके मानव जाति को चेतात्मक प्रेरणा प्रदान करें। यह पुस्तक आदर्शवाद की कूञ्जी है, मानवीय सद्गुणों को परिलक्षित करती है, अतएव महाकवि के बतलाये हुए सिद्धान्तों को धारण करके अपने जीवन स्तर को ऊँचा उठावें। दोहों का भावार्थ भली भाँति समझकर दूसरों को भी समझावें, जिससे मनुष्य जाति का उत्थान और कल्याण हो सके।

धन्यवाद।

ॐ

महाकवि की संक्षिप्त जीवनी

बीसवीं शताब्दी के महाकवि सन्त श्री भँवर जी जाजड़ा का जन्म राजस्थान स्थित बीकानेर जिले के बेलासर ग्राम में सम्वत् १९९१ के पौष कृष्णा षष्ठी को हुआ। आप जन्म से ही कवि हैं। पाँच वर्ष की आयु में ही आपकी काव्य प्रतिभा प्रगट होने लगी थी। जो व्यक्ति आपके सम्पर्क में आया उसे भली-भाँति ज्ञात हो गया कि आप एक असाधारण पुरुष, परमात्मा के प्रतिनिधि हैं। आपका जीवन अपने लिए नहीं अपितु दूसरों के लिए हुआ है, यह सत्य छिपा नहीं रह सकता है। आपका व्यक्तित्व विलक्षण प्रकार का है, मान-बड़ाई, धन-दौलत और स्वार्थपरता आपके जीवन से कोसों दूर रहती है। लुक-छिपकर रहना, किसी का उपकार करके उससे तत्काल अलग हो जाना, समाज का बोझ बनकर नहीं रहना आदि-आदि आपके चरित्र के प्रमुख अंग हैं।

आप गृहस्थाश्रमी होकर भी संसार से वैसे ही अछूते रहते हैं जैसे कमल का फूल जल में रहकर भी जल से अलग रहता है। आपकी विशेष महत्वाकांक्षा यह रहती है कि समस्त संसार ईश्वर को पहचाने और सभी को परमात्मा प्राप्त हो जाय। संसार में सब सुखी हो, कोई दुःखी नहीं रहे, कोई किसी पर अन्याय, अत्याचार नहीं करे, प्रत्येक मनुष्य धर्म का पालन करे, सर्वत्र राम का राज्य रहे।

आपके द्वारा अनेक ग्रन्थों की रचना हुई है जैसे श्रीरामकथा महाकाव्य, कृष्णायन महाकाव्य, दिव्य देश, श्री भँवर भजनावली, सत्संग रामायण, श्री भँवर दोहावली, गौ-रक्षा महाभियान तथा विवाह पंचमी आदि प्रमुख हैं। आप कुशल संगीतकार, कवि, लेखक, दार्शनिक और मनोविज्ञान के विशेषज्ञ हैं। जो दुःखी व्यक्ति श्रद्धापूर्वक आपके पास आया, वह सर्वप्रकार से सुखी हो गया। श्री भँवर दोहावली के द्वारा आपने मानवीय सद्गुणों को उजागर करके दुर्गुणों से दूर रहने का आग्रह किया है। आशा है आप इस पुस्तक से अधिकाधिक लाभ लेने का भरपूर प्रयास करेंगे।

सभी का मंगल हो।

सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः।

सर्वे भद्राणि पश्यन्ति मा कश्चित् दुःख भाग भवेत॥

ॐ

विषय सूची

हे इष्टदेव

अन्तराल-सागर में भावनाओं की उत्ताल तरंगे प्रबल वेग से हिलोरे ले रही हैं, मानो पराजय की माल्य पहनाकर, असफलता के गहरे जल में मुझे सदा के लिए डुबो देना चाहती हो।

हे नाथ! क्षितिज का नग्न रूप बड़ा भयंकर हो उठा है। मेरे घोर पाप निर्लज्ज होकर वायुमण्डल में चिल्ला चिल्लाकर मेरी तीव्र भर्त्सना कर रहे हैं, समस्त सृष्टि सुन रही है, मैं अवाक्-स्तंभित लज्जा के मारे मरा जा रहा हूँ।

हे करूणासागर! मुझे ऐसा भी आभास हो रहा है मानो महाकाल ने अपने भीमकाय नगाड़े मेरे कन्धों पर रख दिये हैं और स्वयं मेरे मस्तक पर बैठकर उन नगाड़ों पर इतनी प्रचण्ड शक्ति से प्रहार कर रहा है कि मेरे कर्ण-पट, फटने ही वाले हैं। मेरा मस्तिष्क शून्य हो चुका है। मैं बोझ की असह्य वेदना से दबा जा रहा हूँ।

हा! देव, मुझपर कितनी असंख्य तिरस्कृत दृष्टियाँ पड़ रही हैं। मेरी चेतना के आधार पर इन दृष्टियों में क्रूरता, कठोरता, व्यंग एवं घृणा की झलक है।

हे प्राणेश्वर! हे मानस मणि! मैं अकेला हूँ, अनाथ हूँ, असमर्थ हूँ, विह्वल हूँ, रक्षा कीजिये, रक्षा कीजिये।

वन्दना

हे कर वीणा धारिणी, हे शारद हे मात।
वत्स चरण रज चाहता, द्वार खड़ा सकुचात॥१॥

शिव सुत गज मुख गणपति, गिरिजालाल गणेश।
जिनके नाम प्रताप से, होत अमंगल शेष॥२॥

वन्दऊँ शिव गिरिजा चरन, दीनबन्धु दातार।
अविनाशी त्रिभुवन पति, देव करे जयकार॥३॥

राम भक्त कवि कुल रवि, गुरुवर तुलसीदास।
अन्धकार हिय ढूँढ़ कर, तुरन्त कीजिये नाश॥४॥

सुमति देहु हनुमत प्रभु, भय संशय हो दूर।
रामभक्ति पावन नदी, हृदय बहे भरपूर॥५॥

अवधपति श्री रामचन्द्र, कृपा निधान दयाल।
जन्म-जन्म के पाप को, हर लीजै तत्काल॥६॥

वन्दऊँ कामद गिरि चरण, गोवर्धन गिरिराज।
अभय दान मोहे दीजिये, सफल कीजिये काज॥७॥

सन्तन पद सिर नाय के, सुमरु देवी देव।
बाधा-विघ्न मिटाइये, चरण-शरण मोहि लेव॥८॥

प्रणाम

जो प्रातः उठ इष्ट को, सदा नवावे शीश।
''भँवर'' कहे उन पर सदा, कृपा करे जगदीश।।१।।

मात-पिता-गुरु पद कमल, नित्य करे प्रणाम।
''भँवर'' वही सच्चा पुरुष, बाकी नमक हराम।।२।।

मात-पिता-गुरु-सन्त संग, करो न वाद विवाद।
''भँवर'' कहे प्रणाम कर, कटे कोटि अपराध।।३।।

''भँवर'' नित्य प्रणाम से, पावे गुण और ज्ञान।
बन जावे तूँ जगत में, ध्रुव हरिश्चन्द्र समान।।४।।

जो प्रणाम करते नहीं, सो नर पशु समान।
''भँवर'' जगत में ना चले, मानव का अभिमान।।५।।

बालक में गुण ऊपजे, करे अगर प्रणाम।
जो इसके विपरीत हैं, पावे दुःख परिणाम।।६।।

मात-पिता-गुंरु बड़न को, करत रहो परनाम।
नित नव आशीष लीजिये, छोड़ जगत के काम।।७।।

''भँतर'' कहे परणाम से, क्षमा होय अपराध।
आशीष से सुख यश बढ़े, आशीष महा अगाध।।८।।

राम महिमा

''भँवर'' कमाई जो करे, सो निश्चय फल पाय।
लाख करो इन्कार तुम, जबरन मिलिहैं आय॥१॥

हम धोबी के स्वान सम, ''भँवर'' सुनो हे नाथ।
हम से तो रावण भला, मरा राम के हाथ॥२॥

''भँवर'' पड़ा था कीच में, करते लोग मखौल।
कमल खिला एक पास में, बढ़ा जगत में मोल॥३॥

दुविधा सब सुविधा भई, लेत हरि का नाम।
आक हमारे भाग में, खाऊँ निशदिन आम॥४॥

कल तक हम अति नीच थे, नीन्दा करते लोग।
''भँवर'' राम के नाम से, भये सराहन जोग॥५॥

राम भक्त ने रीझ के, दी हमको आशीष।
''भँवर'' सरीखे अधम का, उठा जगत में शीश॥६॥

जनम दिया तोहे राम ने, रक्षक-पालक राम।
फिर भी राम भजे नहीं, काहे नमक हराम॥७॥

राम नाम के जोर से, पत्थर तैरे नीर।
सात समुन्दर लँघ गये, पल में हनुमत वीर॥८॥

चौरासी लाख योनियाँ

लख चौरासी भुगत के, पायो मनुज शरीर।
"भँवर" हरि को ना भजा, फूटा हा! तकदीर॥१॥

शूक-कीट और पशु बना, अति दारूण दुःख पाय।
"भँवर" हरि के नाम बिन, फिर-फिर गोता खाय॥२॥

धर्म कर्म सेवा करूँ, रटूँ तुम्हारा नाम।
"भँवर" कहे इस जगत में, यही बड़ा है कांम॥३॥

उत्तम भोजन जल मिला, निन्द्रा कामिनि गेह।
"भँवर" हरि के भजन बिन, चौरासी में देह॥४॥

चौरासी दुःख झेल के, पाई कञ्चन देह।
"भँवर" कहे श्री राम भज, अमृत बरसे मेह॥५॥

जग माया का जाल है, फँसें अभागे लोग।
"भँवर" उन्हें बस चाहिये, नीद्रा भोजन भोग॥६॥

कुकर सुकर महिष खर, देह पातकी पाय।
बार-बार जनमें मरे, "भँवर" कहे समुझाय॥७॥

लख चौरासी योनियाँ, भटके पापी रोय।
मूक बने तड़फत फिरे, नहीं सहायक कोय॥८॥

दीन

"भँवर" जगत में आय के, जो तूँ चाहे खैर।
दीनन से मत कीजिये, राग-द्वेष अरू बैर॥१॥

दीन दुःखी की आह में, लाखों अणु विस्फोट।
"भँवर" उन्हें खुश राखिये, बड़ी भयंकर चोट॥२॥

दीनन का दुःख जो सुने, वे बड़भागी लोग।
"भँवर" दुःखी की चाकरी, पावे नर संयोग॥३॥

बाली बल में आय के, राख्यो दीन सताय।
दीनबन्धु तहँ जाय के, पल में दिया मिटाय॥४॥

दीनन पर करूणानिधि, राखे हरदम हाथ।
"भँवर" नाम राख्यो हरि, अपनो दीनानाथ॥५॥

दीनन के मन की दशा, मुख मण्डल दरसात।
"भँवर" कहे होंठन हँसी, नयन नीर बरसात॥६॥

दया कीजिये दीन पर, दीन बन्धु के पूत।
द्रवित नहीं जो दीन पर, बने नगर का भूत॥७॥

पूर्व जन्म के कर्म ही, दीन दशा दिखलाय।
बुद्धिमान नर जगत में, कर्म सुधारे आय॥८॥

चित्रकूट

चित्रकूट साकेत है, राम सिया को धाम।
दरशन की अभिलाष जो, भजन करो निष्काम॥१॥

देवसरि मन्दाकिनी, करती पातक नाश।
दर्शन मज्जन स्नान कर, राख अटल विश्वास॥२॥

जहाँ राम ने भरत को, लीना कण्ठ लगाय।
"भँवर" चलो उस देश में, चारों फल बिसराय॥३॥

चित्रकूट में मन बसे, देह जगत में रोय।
"भँवर" कहे प्रभु रीझ के, कभी बुलावे मोय॥४॥

चित्रकूट में जाय के, राखूँ कुटी बनाय।
राम भक्त जग ढूँढ़ के, लूँगा पास बसाय॥५॥

चित्रकूट उर आय के, लीन्हा चित्र बनाय।
"भँवर" बसे उस चित्र में, लखन सिया रघुराय॥६॥

चित्रकूट में चन्द्रमा, करता अमृत मेह।
"भँवर" मर्म जो जानता, अमर करे निज देह॥७॥

जिह्वा निव्या वश करो, मन इन्द्रिय को मार।
चित्रकूट में तब रहो, "भँवर" मिले करतार॥८॥

सुख-दुःख

दुःख की ना चिन्ता करूँ, सुख की करूँ न आस।
''भँवर'' कहे हमने किया, रघुपति पर विश्वास॥१॥

दुःख आया नर साथ ले, सुख का शुभ सन्देश।
''भँवर'' तनिक घबरा मती, होने दे प्रवेश॥२॥

दुःख चाहे तो सुख मंगा, सुख चाहे तो दूःख।
अन्त सुखी हरदम सुखी, यही विधि का रूख॥३॥

''भँवर'' जगत में दुःख भला, सुख पाऊँ कहीं और।
दुःख का घर यह जगत है, सुख की चिन्ता छोर॥४॥

जो सुख में हरषे नहीं, दुःख में नहीं घबराय।
''भँवर'' कहे ऐसा पुरुष, ब्रह्मज्ञानी कहलाय॥५॥

छाँह-धूप सुख दुःख जगत, आवे और चल जाय।
तब नर क्यों चिन्ता करे, ''भँवर'' कहे समुझाय॥६॥

जो सुख को ढूँढ़त फिरे, मिले न जीवन खोय।
''भँवर'' प्रभु के नाम बिन, जनम-जनम नर रोय॥७॥

रात गई आया सुबह, दुःख जावे सुख आय।
यह क्रम कर्माधीन है, कभी नहीं टल पाय॥८॥

नारी धर्म

पति सेवा में रत रहे, पति परमेश्वर जान।
उस नारी के सामने, "भँवर" झुके भगवान॥१॥

याचक आवे द्वार पर, "भँवर" करो सन्मान।
कुछ देकर लौटाइये, नारी धर्म महान॥२॥

सास श्वसुर की चाकरी, करे समझ पितु मात।
"भँवर" कहे ऐसी त्रिया, जग में पूजी जात॥३॥

रोगी-मूरख-आलसी, होय कुरुप अपंग।
सच्ची नारी ना तजै, "भँवर" पति का संग॥४॥

जो पति की नीन्दा करे, पर-नर का सम्मान।
"भँवर" लोक परलोक में, वैश्या जैसा मान॥५॥

पर पुरुषों के संग जो, नार लगाती नेह।
"भँवर" कहे कोटिक जनम, सड़े ज़गत में देह॥६॥

लुक-छिप पर-नर से मिले, रखे वैवाहित हेत।
सो नारी यमलोक में, पावे अगणित बेंत॥७॥

मरयादा सत् शीलता, नारी का शृँगार।
धरम धारिणी नार ही, उपजावे करतार॥८॥

मित्र

"भँवर" कहे उस मीत पर, मत कीजै विश्वास।
जो दुःख में पिघले नहीं, धन यौवन का दास॥१॥

सुख में संग छोड़े नहीं, दुःख में भागे दूर।
"भँवर" कहे उस मीत पर, करता मूढ़ गरूर॥२॥

मित्र लुटाई सम्पदा, निर्धनता दी खोय।
पाँव दबावे कृष्ण जी, रहे सुदामा सोय॥३॥

दो मित्रन के बीच में, अगर नहीं है त्याग।
ऐसी जग में मित्रता, "भँवर" कहावे स्वांग॥४॥

मित्र बनाकर धन हरे, हरे मीत्र की नार।
"भँवर" कहे उस नीच पर, थूको बारम्बार॥५॥

नैनन में प्रीति अति, दया धर्म और त्याग।
ऐसे मित्र बनाइये, "भँवर" कहे अनुराग॥६॥

सखा नहीं जो स्वारथी, सखा नहीं जो साँप।
सखा कहाँ जो कह नटे, सखा न देय संताप॥७॥

मित्र नार की नार है, नर को नर है मीत।
लिंग भेद की मित्रता, नियमों के विपरीत॥८॥

चिन्ता

चिन्ता करता आलसी, "भँवर" कहे दिन रैन।
बिना परिश्रम के यहाँ, कैसे हो सुख चैन।।१।।

चिन्ता ऐसा रोग है, करे खोखली देह।
खो बैठे निज भाग्य तन, "भँवर" नहीं सन्देह।।२।।

कर्म बिना नर ना मिले, सुख सम्पत्ति और मान।
"भँवर" छाड़ चिन्ता सकल, हे मूरख नादान।।३।।

चिन्ता ऐसी कीजिये, होवे जग कल्याण।
"भँवर" सभी प्रारब्ध से, पायेगा इन्सान।।४।।

चिन्ता काली सर्पणी, डस-डस देवे कष्ट।
"भँवर" अमोलक देह को, कर दे खा-खा नष्ट।।५।।

चिन्ता आई लेन को, चतुराई और ज्ञान।
"भँवर" पुण्य की वाटिका, कर डाली श्मशान।।६।।

चिता जलावे पलक में, चिन्ता सदा जलाय।
चिन्ता कबहु न कीजिये, नागिन ज्यों डस खाय।।७।।

समाधान चिन्ता नहीं, चिन्ता नहिं उपचार।
"भँवर" कहे चिन्ता तजो, कर्म करो सुखसार।।८।।

सादगी और शृँगार

सच्चा सुख है सादगी, सच्चा दुःख शृँगार।
"भँवर" कहे माया तजो, सुमिरो सिरजन हार॥१॥

हक का भोजन कर मना, हक का वस्तर धार।
"भँवर" नहीं घर आपुना, हक में पाँव पसार॥२॥

तन पर आभूषण लदे, वस्त्र बहुत अनमोल।
"भँवर" कहे खुल जायेगी, एक दिन सारी पोल॥३॥

"भँवर" भली है सादगी, जग करता सम्मान।
सेवा कर संसार की, पावे पद निर्वान॥४॥

तन माटी का पूतला, मलता तेल फुलेल।
"भँवर" अरे उसमें लगा, राम नाम की बेल॥५॥

ईश्वर ने सबका किया, प्राकृतिक शृँगार।
"भँवर" हवा के मैल ने, दीन्हा रूप बिगार॥६॥

कृत्रिम रूप टिके नहीं, देता समय बिगार।
असली जो हरि ने दिया, राखो सदा सम्भार॥७॥

असली धन है सादगी, नकली धन शृँगार।
सद्गुण देह सँवारिये, ज्ञानी करो विचार॥८॥

सूम

''भँवर'' सूम की नौकरी, मत कीजै नर-नार।
सुख उपजावे एक दिन, दुःख देवे हर बार॥१॥

''भँवर'' कहे इस सूम की, बड़ी अनोखी बात।
ना खावे ना खरचता, जमा करे दिन-रात॥२॥

गया सूम बाजार में, लौटा खाली हाथ।
दुःख देता परिवार को, ''भँवर'' खर्च नहीं पात॥३॥

कंजुसी मत कर मना, होवे ना धनवान।
''भँवर'' कहे कुछ बचतकर, अति लालच अज्ञान॥४॥

''भँवर'' कहे हे सूम सुन, बदल तुम्हारा भेष।
तेरे कारण लालची, दुःख पावे सब देश॥५॥

कृषक ने पुतला बना, खड़ा किया मध्य खेत।
''भँवर'' सूम भी है वही, ना खावे ना देत॥६॥

कंजूसी मत कर मना, कंजूसी में दोष।
ईश्वर ने तुमको दिया, तूँ भी जग को पोष॥७॥

सूम-सूम से लड़ पड़ा, कौन छोट बड़ कौन।
बात उठी जब दान की, दोनों हो गये मौन॥८॥

सत्संग

सत्संग में नित्य जाय के, बना "भँवर" इन्सान।
जिनको सत्संग ना रूचे, सो नर पशु समान॥१॥

सत्संग की महिमा बड़ी, गावे वेद पुराण।
भवसागर से तरन को, मारग है आसान॥२॥

जो नर सत्संग का करे, नीन्दा और अपमान।
"भँवर" कहे उस नीच का, यमपुर में स्थान॥३॥

सत्संगत मे आय के, किया न सत्य विचार।
हाय अभागा ही रहा, "भँवर" कहे बहुबार॥४॥

सत्संग से नफरत करे, प्रेम करे बकवास।
"भँवर" कहे उस क्षुद्र का, निश्चय सत्यानाश॥५॥

सत्संग की साबुन मिली, धोऊँ पाप करोड़।
"भँवर" पतित का राम से, दीन्हा नाता जोड़॥६॥

सत्संग ऐसी कीजिये, ज्यों खरबूजा खेत।
सत्गुण से सत्गुण बढ़े, भक्ति ज्ञान समेत॥७॥

संग चढ़ावे रंग को, कीट भृंग बन जाय।
जैसी संगत कीजिये, वैसा ही गुण आय॥८॥

भलाई

''भँवर'' सकल संसार का, भला करे भगवान।
सबका कष्ट निकाल कर, हमको दीजै आन॥१॥

भला कीजिये जगत का, बुरा कीजिये मोर।
''भँवर'' हमें कुछ डर नहीं, रक्षक नन्द किशोर॥२॥

एक मरा सब कह उठे, चला गया शैतान।
एक मरा सब रो पड़े, बुरा किया भगवान॥३॥

''भँवर'' भलाई कीजिये, बुरा न कीजै कोय।
ईश्वर सबको देखता, जागे रहा न सोय॥४॥

जो तुमको लज्जित करे, तू कर उनका मान।
''भँवर'' भलाई छोड़ मत, न्याय करे भगवान॥५॥

अगर भलाई ना करे, बुरा न कर इन्सान।
दीन दुःखी की आह से, तड़फेगा नादान॥६॥

भला भलाई ना तजै, राखे दया विचार।
सन्त सरोवर मेह तरु, भले जगत में चार॥७॥

भला करे जग हो भला, बुरा करे दुःख आन।
सज्जन दुर्जन की यहाँ, भली-बुरी पहचान॥८॥

नेता

त्याग बिना नेता नहीं, त्याग बिना नहीं सन्त।
"भँवर" कहे बिन त्याग के, कभी तुड़ावे दन्त॥१॥

नेता और एक सन्त में, तनिक नहीं है भेद।
एक तपै स्वतन्त्र में, एक तपै जन कैद॥२॥

तर्क सहित निर्णय करे, नेता के गुण खास।
"भँवर" कहे सर्वोच्च गुण, जन-मन का विश्वास॥३॥

देश धर्म जन की व्यथा, जो पावे आभास।
"भँवर" आज इस हिन्द को, उस नेता की आस॥४॥

नेता सेवक सकल का, राष्ट्र प्रेरणा देत।
"भँवर" तनिक नहीं स्वार्थी, न्याय पक्ष ही लेत॥५॥

नेत्रहीन नेता बना, नेत्र हीन मत पाय।
"भँवर" कूप में गिर पड़े, दोनों ही संग जाय॥६॥

नेता उनको जानिये, जो सब विधि बेईमान।
जनता का शोषण करे, फिर भी उच्च महान्॥७॥

लोभ-प्रलोभन बाँट के, देकर काली घूस।
ठग-ठग वोट बटोरता, परधन परसुख चूस॥८॥

सन्त

"भँवर" कहे जग की व्यथा, सुनते साधु सन्त।
उनकी सीख सुहावनी, करे सकल दुःख अन्त।।१।।

सन्तन के क्षण मिलन से, कटते कोटि विकार।
"भँवर" सन्त की चरण रज, ज्यूँ गङ्गा जल धार।।२।।

सन्त वही जो मर मिटे, हँस-हँस जगत हिताय।
नहीं स्वारथ नहीं लालशा, राखे शीश झुकाय।।३।।

हे राजा तूँ राज्य कर, ले सन्तन की राय।
"भँवर" कहे चाणक्य सा, राजगुरु अपनाय।।४।।

"भँवर" कहे उस सन्त को, सन्त न कहिये कोय।
काम क्रोध मद लोभ में,, राखे चित्त डुबोय।।५।।

दया धर्म अरु सरलता, चाहत जग कल्याण।
"भँवर" सदा हरि को भजै, सन्तन की पहचान।।६।।

भगवा पहने कापड़ा, मन में कपट बसाय।
"भँवर' कहे यमलोक में, नाना विधि दुःख पाय।।७।।

शिष्य बनाकर धन हरे, पर नारी का शील।
ऐसे दुर्जन सन्त के, ठोकों सिर पर कील।।८।।

ईश्वर

ईश्वर अल्लाह एक है, देखो सोच विचार।
"भँवर" कहे जन्मान्ध का, कौन करे उपचार॥१॥

जो ईश्वर को भूल कर, करे सुखों की आश।
"भँवर" कहे उस मूढ़ का, पग-पग पर उपहास॥२॥

लावारिस युवती चली, हुआ सकल अपमान।
"भँवर" हरि के नाम बिन, मानव मृत समान॥३॥

ईश्वर को नश्वर कहे, जग में लीन अचेत।
"भँवर" कहे किस स्वाद पर, फिर-फिर चाटे रेत॥४॥

ईश्वर तेरी आत्मा, देती जो उपदेश।
"भँवर" वही है मोक्ष का, सच्चा शुभ सन्देश॥५॥

जल-वायु-अन्न देत हैं, बिना मोल भगवान।
सुर दुर्लभ नर तन दिया, हरि का कर सम्मान॥६॥

ईश्वर महा समुद्र हैं, हम उस जल की बूंद।
पुत्र पिता को ना भजे, बैठा आँखे मूँद॥७॥

निराकार साकार हैं, व्यापक सर्व समान।
आदि-अनादि अनन्त हैं, ईश्वर दया निधान॥८॥

भँवर जाल

"भँवर" भँवर में फँस गया, भव सागर मझधार।
राम बिना इस लोक में, कौन उबारन हार॥१॥

नैया लीनी घाट पर, दीन्ही तुरन्त चलाय।
"भँवर" भँवर में फँस गई, कृपा करो रघुराय॥२॥

भव सागर यह जगत है, माया भँवर कहाय।
जीव अभागा फँस गया, लख चौरासी पाय॥३॥

भँवर जाल में जीव तूँ, पावे कष्ट अपार।
आश्रय लेइ हरि भजन का, तब होवे निस्तार॥४॥

"भँवर" कहे इस भँवर में, अगणित प्राण गँवाय।
बच जाते कुछ लोग ही, जिन्ह हरि नाम सुहाय॥५॥

"भँवर" तुम्हारा क्या करे, रघुपति खेवनहार।
जिनका रक्षक राम है, कौन मिटावन हार॥६॥

महा सिन्धु यह जगत है, माया भँवर कहाय।
जो हरि हर की शरण है, यहाँ-वहाँ सुख पाय॥७॥

कमल नाम यह जगत है, भँवर मोह कहलाय।
जीव अभागा फँस गया, भव सागर में आय॥८॥

विद्यार्थी

वर्तमान विद्यार्थी, ''भँवर'' बड़े उद्यण्ड।
योग्य गुरु के ही बिना, मिला जगत को दण्ड॥१॥

त्रिविध शक्ति जड़ मूल से, बैठा छात्र बिसार।
पुस्तक से मन उठ गया, बसा पराई नार॥२॥

शिक्षा ऐसी दीजिये, करे जगत कल्याण।
पेट भरण की सीख से, ''भँवर'' भया अज्ञान॥३॥

महापुरुषों की जीवनी, रटी करी ना याद।
''भँवर'' कहे आदर्श बिन, छात्र हुए बर्बाद॥४॥

शिक्षालय में जा डटे, करे छात्र हड़ताल।
शिक्षक को गाली बके, कैसी माँ के लाल॥५॥

कौवे जैसी चेष्टा, बगुले जैसा ध्यान।
सजग श्वान ज्यों नीन्द लेय, ऐसा छात्र महान॥६॥

लक्ष्य एक विद्या मिले, मन भटके नहीं ओर।
जो ऐसा विद्यार्थी, नाम कमावे जोर॥७॥

तपसी और विद्यार्थी, दोनों एक समान।
लक्ष्य अगर बिसरे नहीं, दोनों बने महान॥८॥

अभिमान

साधो दम्भ न कीजिये, रखिये शीश झुकाय।
राम-सिया में जगत है, रखिये ज्ञान जगाय॥१॥

गर्व दिखावे हीनता, गर्व दिखावे काल।
हिरणाकश्यप कंस और, रावण भये बेहाल॥२॥

ईश्वर भोजन क्या करे, पूछत सन्त सुजान।
हरि बोले भोजन मेरा, भक्तों का अभिमान॥३॥

नर माटी का पूतला, सोना चाँदी पाय।
"भँवर" फूल कुप्पा भया, तनिक शर्म नहीं आय॥४॥

विद्या यश बल पाय के, जो नर करे गरुर।
"भँवर" कहे उस मान पर, जगत उड़ावे धूर॥५॥

ईश्वर सब कुछ सह सके, सह न सके अभिमान।
तेहि कारण रघुवीर ने, धारा तीर कमान॥६॥

बड़ बोलन तूँ पास आ, "भँवर" निरख संसार।
लाखों दिग्गज चल बसे, तूँ भी जावनहार॥७॥

रावण ने दस शीश पर, किया प्रबल अभिमान.
"भँवर" कहे उस वंश का, रहा न नाम निशान॥८॥

ईर्ष्या

ईर्ष्या कपट विसारिये, रखो एकता भेष।
जन-मन की सेवा करो, बढ़े हमारा देश॥१॥

जो जग कुछ नहीं कर सके, उनमें ईर्ष्या होय।
करने वाले कर गये, ईर्ष्यालु रहा रोय॥२॥

कीट वस्त्र को कुतर के, जैसे करता नष्ट।
"भँवर" कहे ईर्ष्या वही, देत मनुज को कष्ट॥३॥

"भँवर" देख अनजान को, लगे भौंकने स्वान।
उन्नत व्यक्ति की करे, ईर्ष्यालू पहिचान॥४॥

सुखी पडौसी देख कर, तूँ भी खुशी मनाय।
उसने शुभ करनी करी, तूँ भी कर दिखलाय॥५॥

घृणा कीजिये पाप से, अवगुण होवे दूर।
"भँवर" राम को सुमरिये, कर दे माफ कसूर॥६॥

ईर्ष्या ऐसी आग है, जो तन देत जलाय।
पर सुख को निज मानिये, "भँवर" कहे समुझाय॥७॥

भेद बढ़ावे ईर्ष्या, क्रोध बढ़ावे मान।
दम्भ बढ़ावे कीर्ति, पूण्य बढ़ावे दान॥८॥

राजनीति और धर्म

बिन स्वामी जग सोहती, जैसे युवती नार।
राजनीति बिन धर्म के, निश्चय करे बिगार॥१॥

"भँवर" धर्म के बान्ध में, राजनीति जलधार।
सीमा लांघे जलनिधि, प्रलय करे संसार॥२॥

धर्म गुरु की सीख से, जो नृप करता राज।
"भँवर" सफल नैतृत्व हो, रखे देश की लाज॥३॥

राजनीति बिन धर्म की, दुर्योधन अपनाय।
"भँवर" मिटाया राज्य सब, महाभारत रच जाय॥४॥

नीति ऐसी चाहिये, पक्षपात नहीं होय।
निर्धनता संसार की, मूल सहित दे खोय॥५॥

राजनीति यदि धर्म से, करे सम्बन्ध विच्छेद।
"भँवर" अमंगल हो सकल, यही पुकारत वेद॥६॥

धर्म कवच अपनाइये, राजनीति दृढ़ होय।
धर्म बिना संसार में, नीति विधवा रोय॥७॥

धर्म बिना नीति नहीं, नीति बिन नहीं राज।
धर्म शीश धरि राखिये, जैसे नृप सिर ताज॥८॥

अश्लील साहित्य

अध्ययन से सद्गुण बढ़े, अध्ययन दुर्गुण लाय।
अध्ययन ऐसा कीजिये, हम-तुम सब सुख पाय॥१॥

अश्लील पुस्तक मत पढ़ो, विकृत हो मन अंग।
जैसे विष फैले बदन, छूवत श्याम भुजंग॥२॥

अति उत्तम साहित्य से, मिलता ज्ञान प्रकाश।
अश्लीलता के छूत ने, कर डाला सब नाश॥३॥

अश्लील पोथी पढ़न से, तन-मन सब विधि क्षीण।
कर्त्तब्यों की राह पर, कभी न हो उत्तीर्ण॥४॥

ऐसी संगत बैठिये, पुस्तक हो या मित्र।
''भँवर'' आत्म शान्ति मिले, सुदृढ़ होय चरित्र॥५॥

जो अश्लील रचना करे, सो लेखक मति हीन।
''भँवर'' देश की विद्वता, कर डारी अति दीन॥६॥

अश्लील छवि नर देख के, बना बाँवरा भूत।
छेड़ी पर बेटी-बहन, लगे शीश पर जूत॥७॥

कला नहीं है नग्नता, कला नहीं सहवास।
नग्न बदन मैथुन करे, पशु पक्षी परकाश॥८॥

परख

कला कर्म विद्या बहुत, नहीं पारखी लोग।
"भँवर" कहे सबको यहाँ, लग़ा पेट का रोग॥१॥

उठे पारखी जगत से, हाय! बसे कित जाय।
"भँवर" मोर मन की व्यथा, कौन सुने चित्त लाय॥२॥

पूर्वकाल के पारखी, ढूँढ़ रहे थे बीज।
भँवर" आज उन बीज की, बैठी ना तजबीज॥३॥

ंस उड़े सब गगन में, उतर गये थल काग।
"भँवर" आँख एक मूंद के, नंई अलापत राग॥४॥

ईश्वर सच्चा पारखी, परख लिया संसार।
कमल उगाया कीच में, फिर कीन्हा गलहार॥५॥

परख तुम्हारी क्या करूँ, हमसे परख न होय।
"भँवर" कहाँ का पारखी, देखत देत डुबोय॥६॥

परख बिना संसार में, असली-नकली एक।
भले-बुरे की भिन्नता, मत कर कहे विवेक॥७॥

हीरा परखे जौहरी, गुण पहचाने ज्ञान।
परख बिना इस जगत में, सब कुछ एक समान॥८॥

उन्नति

उन्नत पथ पर बढ़ चलो, रुको न ठोकर खाय।
एक दिन मंजिल दौड़ के, गले लगेगी आय॥१॥

चींटी चढ़-चढ़ गिर रही, ''भँवर'' हजारों बार।
हाथी जैसा आदमी, बैठा हिम्मत हार॥२॥

उन्नति है किस काम की, जब नहीं सेवा भाव।
मूरख तूँ उपकार बिन, व्यर्थ लगावे ताव॥३॥

उन्नति प्रथम शरीर की, अन्य स्वतः सब पाय।
''भँवर'' कहे बिनु धेनु के, दूध कहाँ से खाय॥४॥

पढ़ लिखकर बाबू भया, सूट-बूट तन धार।
''भँवर'' बिना उपकार के, लाख बार धिक्कार॥५॥

भौतिक उन्नति से बढ़े, भोग-रोग और शोक।
मन मतवाला हो चले, सके न कोई रोक॥६॥

आत्मिक उन्नति कीजिये, सच्ची उन्नति सोय।
शीश झुकावे जगत सब, चहुँदिक् जय-जय होय॥७॥

जो उन्नति पथ ना चले, सो नर मृत समान।
नाम लजावे वंश का, करे न कोई मान॥८॥

रामायण

रामायण को पायकर, सुखी हुआ संसार।
"भँवर" कहे घर-घर हुआ, रघुकुल सा परिवार॥१॥

कागज की नैया बनी, रामायण है नाम।
भवसागर में तैरती, केवट हैं श्री राम॥२॥

जिन घर रामायण बँचै, सो घर स्वर्ग समान।
रामायण के सुनन को, जा पहुँचे हनुमान॥३॥

रामायण निशदिन पढ़े, उर बिच राखे राम।
"भँवर" तनिक संशय नहीं, सफल होय सब काम॥४॥

रामायण के रहस्य को, जानत बिरले सन्त।
ज्यों-ज्यों गहरे पैठिये, त्यों-त्यों मिले न अन्त॥५॥

एक-एक अक्षर मन्त्र है, एक-एक शब्द पुरान।
वाक्य वेद का भेद है, काण्ड ब्रह्म पहचान॥६॥

राम सुयश रस पीजिये, रामायण रस खान।
जीवन भव से ऊबरे, सन्त करे गुणगान॥७॥

रामायण जीवन कला, सद्गुण देत जगाय।
घट का तिमिर मिटाय के, परमेश्वर दिखलाय॥८॥

गुरु

शिक्षक ऐसा चाहिये, करे विवेक पछान।
चरित्र सजावे छात्र का, दे कर उत्तम ज्ञान।।१।।

शिक्षक ऐसा चाहिये, साधक नम्र विवेक।
"भँवर" कहे ऐसा गुरु, छात्र बनावे नेक।।२।।

वर्तमान शिक्षक लखे, सब विधि भये अयोग्य।
"भँवर" उन्हें बस चाहिये, बिनु श्रम धन और भोग।।३।।

धोती कुरता बदल के, धरा कोट पतलून।
"भँवर" मातृ भाषा तजी, अंगरेजी की धून।।४।।

शिक्षालय ऐसी बनी, लायक भोगी लोग।
"भँवर" नहीं सुख ऐश में, विद्या का संजोग।।५।।

शिष्य बड़ा या गुरु बड़ा, किसका कितना तोल।
सद्गुण देखि पछानिये, "भँवर" कौन अनमोल।।६।।

शिक्षा ऐसी दीजिये, होय चरित निर्माण।
छात्र सुपथ पर बढ़ चले, ऐसा मिले प्रमाण।।७।।

शिष्य बनाकर धन हरे, हरे पराई नार।
सब्ज बाग दिखलाय के, देता धर्म बिगार।।८।।

गृहस्थ धर्म

गृह़स्थ धर्म सम धर्म ना, देखा वेद उठाय।
''भँवर'' जोग की लालसा, दिनी आज दबाय॥१॥

गृहस्थी ऐसा चाहिए, आपस में दृढ़ प्रेम।
याचक को भीक्षा मिले, पूजा दीपक नेम॥२॥

गृहस्थ धर्म की नायिका, नारी जिम्मेदार।
जिस घर में नारी नहीं, सो घर भया उजार॥३॥

गृहस्थ धर्म की लीजिये, रामायण से सीख।
''भँवर'' कहे संसार को, दी तुलसी ने भीख॥४॥

सेवा की रख भावना, कर गृहस्थी में वास।
''भँवर'' कहे जो फल मिले, ना पावे सन्यास॥५॥

गृहस्थी में सबसे बड़ा, सुख है नर सन्तोष।
''भँवर'' कहे हरि नाम से, भरत रहो उर कोष॥६॥

''भँवर'' अतिथि देवता, गृहस्थ धर्म अनुसार।
भूखा प्यासा याचकी, करो सदा सत्कार॥७॥

गृहस्थ धर्म की क्या कहूँ, यह खाण्डे की धार।
साधु से गृहस्थी बड़ा, देखा सोच विचार॥८॥

आलस्य

चींटी छोटे पेट की, श्रम करती दिन-रात।
बड़ा पेट नर पाय के, खाय-पीय सो जात॥१॥

सबसे घातक आलसी, "भँवर" जगत का भार।
ऐसा नर संसार में, मत उपजा करतार॥२॥

नर सोया था कूप पर, लेकर जल की आश।
"भँवर" कौन कब आय के, हाय! बुझावे प्यास॥३॥

दुःख जल का कुँआ खुदा, नाम धरा आलस्य।
"भँवर" अभागा जा गिरा, लोग करे परि हास्य॥४॥

आलस कबहूँ न कीजिये, कटे गरीबी शोक।
अड़ियल टट्टू युद्ध में, पहुँचा दे परलोक॥५॥

आलस्य से मृत्यू भली, क्यों नहीं लेत उधार।
"भँवर" रोग की बाढ़ में, पावे कष्ट अपार॥६॥

आलस्य नर का शत्रु है, पनपावे बहु रोग।
क्षीण करे तन-मन सभी, मिले नहीं जग भोग॥७॥

मेहनत कश इन्सान ही, जो चाहे कर लेत।
महा अभागा आलसी, जैसे पौधा बेंत॥८॥

अयोध्या

अगणित जहँ योद्धा बसे, धरा अयोध्या नाम।
"भँवर" कहे सब देखिये, रवि रजनी एक ठाम॥१॥

अवधपुरी में जो बसे, बड़भागी नर-नार।
सकल जगत निज ढूँढ़ के, प्रगट भये करतार॥२॥

सरयु भई बड़भागिनी, बहती चरण पखार।
अवधपुरी के नाम पर, "भँवर" जाय बलिहार॥३॥

अयोध्या मन में बसी, पल-पल याद सतात।
"भँवर" कहे किस पाप वश, हम दर्शन नहीं पात॥४॥

अवधपुरी की धूल पर, सुख पाऊँगा लोट।
"भँवर" बदा नहीं भाग्य में, लगी आत्मा चोट॥५॥

सुर किन्नर तरसे सदा, चाहत अवध निवास।
कोटि जन्म के पुण्य से, "भँवर" पूर्ण हो आश॥६॥

हृदय अयोध्या जानकर, रखिये राम बसाय।
चिन्ता भय दुविधा मिटे, जीवन धन्य कहाय॥७॥

दिव्य भूमि रवि वंश की, नगर अयोध्या नाम।
सुर नर मुनि वन्दन करे, दास "भँवर" को ग्राम॥८॥

मन

मन से मत नहीं लीजिये, मन चंचल मन नीच।
जो मन पर शाषन करे, सो उत्तम जग बीच॥१॥

जीवन भर हमने किया, अपने मन से बैर।
"भँवर" मनोहर फल मिला, करूँ स्वर्ग की सैर॥२॥

मन-तन का मालिक बना, दस इन्द्रियन ले साथ।
"भँवर" जगत हम जाय के, लौटे खाली हाथ॥३॥

मन कहता तूँ लूट ले, कहे आत्मा पाप।
"भँवर" हाय! मन दे रहा, सब जग को सन्ताप॥४॥

राजहंस है आत्मा, सच्ची सीख सिखात।
मन कौआ झपटे खड़ा, "भँवर" हाय! पछतात॥५॥

विश्व विजय का सेहरा, बान्धू उनके शीश।
जिसने मन वश में किया, इस माया के बीच॥६॥

मन विषयन को मीत है, जैसे जल में मीन।
ऐसा नर नरकन पड़े, जो मन के आधीन॥७॥

मन वाहन पर चढ़ चलो, पहुँचों हरि के पास।
मन का वेग प्रचण्ड है, "भँवर" करो विश्वास॥८॥

चरित्र

चाल चलन जिन्ह नेक है, सो सब विधि जग नेक।
"भँवर" धुरन्धर बहु लखे, चरितवान कोइ एक॥१॥

सफल चरित ले जायेगा, "भँवर" सफलता ओर।
चरित कुपथ पर बढ़ चले, पतन दिखावे घोर॥२॥

श्वेत पत्र सा चरित्र है, अगर कलंकित होय।
पूर्वकाल की स्वच्छता, कभी न पावे धोय॥३॥

सर्व सिद्धियाँ पद तले, होय चरित्र निखार।
"भँवर" जगत की हस्तियाँ, जावे चरण पखार॥४॥

चरित्रवान के कार्य पर, आकर्षित संसार।
सकल सृष्टि की शक्तियाँ, डोलत उनके लार॥५॥

चरित्र एक हीरा कहो, काटत सब पाषाण।
महापुरुषों की जीवनी, "भँवर" देत प्रमाण॥६॥

महा-महा वह राष्ट्र है, जहाँ चरित्र उत्थान।
चरित पतन जिस देश में, वह अघ दुःख की खान॥७॥

धन-यश-बल यदि खो गये, तनिक न चिन्ता शोक।
चरित्र नष्ट यदि हो गया, नष्ट हुए सब लोक॥८॥

आत्मा

जिसने लखी न आत्मा, वश में किया न मन।
''भँवर'' कहे मल कीट सम, पाकर मानुष तन॥१॥

''भँवर'' अमर है आत्मा, कबहुँ न करत अनिष्ट।
पथ प्रदर्शक मोक्ष की, अगर मानिये इष्ट॥२॥

सच्ची सीख सिखावती, अनुचित करे विरोध।
''भँवर'' आत्मा ना लखे, सो नर बाल अबोध॥३॥

दिव्य आत्मा लुप्त सी, मुख पर लिपटा कीच।
''भँवर'' रात-दिन धोवता, राम नाम जल सींच॥४॥

''भँवर'' आत्मा अमर है, मरती नश्वर देह।
मरे नहीं जन्में नहीं, जले न भीगे मेह॥५॥

ईश्वर का ही अंश है, ''भँवर'' आत्मा जान।
लखे नहीं सो जीव है, लखे वही भगवान॥६॥

पावक जरे न जल गरे, मरे न काटी जाय।
अजर अमर है आत्मा, ''भँवर'' कहे समुझाय॥७॥

आत्म जोर अनुदिन बढ़े, जो रखता मन मार।
आत्म क्षीणता मौत है, सज्जन करो विचार॥८॥

घृणा

प्रेम करें सो देवता, क्षमा करे इन्सान।
"भँवर" कहे जग जीव से, घृणा करे शैतान॥१॥

घृणा कीजिये पाप से, पापी से कर प्रीत।
जेहि विधि चन्दन सर्प को, लिपटावे कर मीत॥२॥

ईश्वर ने नर तन दिया, हमने कहा अछूत।
"भँवर" भेद मन ना रखे, सभी राम के पूत॥३॥

घृणा कर निज देह से, संचय करे विकार।
"भँवर" सदा हरि नाम से, भरता जा भण्डार॥४॥

"भँवर" कहे जिस जाति से, घृणा करे संसार।
उन घर जूठे बेर खा, तृप्त भये करतार॥५॥

घृणा मन का पाप है, निर्बलता की देन।
"भँवर" दोष जो ढूँढ़ता, कहाँ जगत में चैन॥६॥

हम ईश्वर के पुत्र हैं, आपस में सब एक।
घृणा कौन किससे करे, कौन बुरा और नेक॥७॥

दुर्गुण से नफरत करो, दोषी से कर प्रेम।
वस्त्र मलिन फेंको नहीं, शुद्ध करो यह नेम॥८॥

काम

काम बदन में ना छिपे, ज्यों मुख लहसुन गन्ध।
"भँवर" काम के वेग में, नैन होत भी अन्ध॥१॥

"भँवर" तपस्वी के हृदय, बसी वासना जाय।
कोटि जन्म की साधना, नष्ट भई क्षण माय॥२॥

काम राम के ना बनै, पग-पग पर परमान।
"भँवर" काम के तजत ही, तुलसी भयो महान॥३॥

काम-क्रोध-मद-लोभ-मोह, पाँचों प्रबल विकार।
राम सूर्य के उदय से, हटे "भँवर" अन्धकार॥४॥

कामी साधक काम का, देता जन्म गवाँय।
"भँवर" कहे संशय नहीं, सीधा यमपुर जाय॥५॥

खर-घोड़ा-कुत्ता-पशु, सबमें व्यापे काम।
"भँवर" मनुज भी है वही, भजे न जब तक राम॥६॥

वीर्य क्षरे जीवन जरे, तन में व्यापे रोग।
कुशल क्षेम यदि चाहता, तज नारी संग भोग॥७॥

जो नारी चिन्तन करे, सो नारी के पास।
पगडण्डी यह मौत की, चहुँदिक् घोर विनाश॥८॥

धर्म

धर्म एक बेड़ी बनी, पड़ी जगत के पैर।
जब तक अंकुश मानिये, "भँवर" सभी की खैर॥१॥

वेद कहत बिन धर्म के, प्रलय होय संसार।
मानव को काबू रखे, "भँवर" धर्म हथियार॥२॥

"भँवर" हमें अस ना मिला, जा तन धर्म न पाय।
धर्म अवज्ञा जो करे, गुण्डा चोर कहाय॥३॥

सबका रक्षक धर्म है, धर्म हमारा नाथ।
"भँवर" घोर विपदा पड़े, धर्म न छोड़े साथ॥४॥

धर्म के रहते भी यहाँ, कितने नर शैतान।
"भँवर" धर्म यदि ना रहे, क्या होवे जग जान॥५॥

धर्म सनातन एक है, अन्य पन्थ कहलाय।
"भँवर" कहे सब पंथ से, एक लक्ष्य ही पाय॥६॥

धर्म एक कानून है, प्रति घट करता राज।
भला-बुरा निर्णय करे, सुरखित रहे समाज॥७॥

धर्म शीश धरि राखिये, यदि चाहो जग खैर।
वह नर मूढ़ अचेत है, करे धर्म संग बैर॥८॥

क्रोध

क्रोध कमाई ना करे, "भँवर" करे नुकसान।
क्रोध असुर के हनन को, प्रगट भये भगवान॥१॥

"भँवर" क्रोध मत कीजिये, क्रोध पाप का मूल।
काँटे को सब फेंक दे, घर में राखे फूल॥२॥

"भँवर" क्रोध की आग में, सुर राक्षस बन जाय।
क्रोधी नर संसार में, सब दृष्टि दुःख पाय॥३॥

तनबल-मनबल-आत्मबल, क्रोध करे धन नाश।
अपयश पाकर हो गया, "भँवर" काल का ग्रास॥४॥

युद्ध-हरण-अन्याय में, जो नहीं करता क्रोध।
"भँवर" दया की ओट में, करता धर्म विरोध॥५॥

निर्बल शत्रु से कभी, मत लीजै प्रतिशोध।
"भँवर" क्षमा कर दीजिये, छाड़ि सकल तन क्रोध॥६॥

क्रोध तत्व चण्डाल है, करे अपावन देह।
बेगहिं जाय नहाइये, क्रोध प्राण हर लेह॥७॥

सहनशीलता कवच है, क्रोध निकट नहीं आय।
गम की महिमा सुखद है, देख लेहु गम खाय॥८॥

धैर्य

धीरज से लघुता घटे, प्रभुता बढ़े शरीर।
दशरथ ने धीरज तजा, लगा श्रवण के तीर॥१॥

धैर्य दृष्टि से देखिये, अन्धकार हो दूर।
धैर्यवान को जगत में, कौन करे मजबूर॥२॥

धीरज धारण ना किया, पग-पग हुआ निराश।
जिनके हिय धीरज बसे, उन पर कर विश्वास॥३॥

इच्छित फल पावे मना, धीरज मन में राख।
"भँवर" निरन्तर श्रम करो, फिर अमृत फल चाख॥४॥

"भँवर" क्रोध के वेग में, धीरज राखे लाज।
जब-जब कीन्हीं शीघ्रता, तब-तब बिगड़ा काज॥५॥

युद्ध और अन्याय में, जो नहीं धारे-धीर।
"भँवर" कहे संशय नहीं, हो परिणाम गम्भीर॥६॥

गुण के संग यदि धैर्य है, वह नर नाम कमाय।
धैर्य बिना गुण गिर पड़े, धैर्य धरन कहलाय॥७॥

संकट में धीरज रखे, शत्रु मित्र बन जाय।
"भँवर" धैर्य बड़ कवच को, राखो हृदय सजाय॥८॥

मीठी बोली

मीठी बोली बोलिये, कटु वाणी मत बोल।
"भँवर" सभी अमृत चहे, को पूछत विष मोल॥१॥

कोयल की सब ही सुने, कागा की नहीं कोय।
"भँवर" कहे रंग एक ही, भेद-भाव क्यों होय॥२॥

जो मुख से मीठा भखे, तिनके लाखों मीत।
"भँवर" कहे इस जगत में, हारे फिर भी जीत॥३॥

"भँवर" सभी से दोस्ती, नहीं किसी से बैर।
कटु बोली के कारने, फैला जग में जहर॥४॥

क्रोधी के तन में अगर, होवे क्रोध उफान।
मीठी बोली बोलिये, शीतल नीर समान॥५॥

बैरी से हो मित्रता, भाखत मीठे बैन।
मधुर चाँदनी के लिए, "भँवर" बनाई रैन॥६॥

मीठी बोली से बढ़े, मान-कान बड़ नाम।
कोयल क्यों प्यारी लगे, कौआ क्यों बदनाम॥७॥

बनो लोकप्रिय जगत में, मुख से मीठा बोल।
सबके प्रति समता रखो, घट का परदा खोल॥८॥

अपवित्र अन्न

जैसा अन्न जल खाईए, वैसी बुद्धि पाय।
''भँवर'' बधिक के घर पला, अहींसा नहीं आय॥१॥

चोर पकाई खीचड़ी, साधु ने ली खाय।
चला गया विश्राम कर, लोटा एक चुराय॥२॥

पूर्वकाल के सन्त जन, खेती करते जाय।
निज हाथन से बीनते, निज ही खाय पकाय॥३॥

''भँवर'' विदेशी अन्न से, डूबा भारत देश।
नित्य कर्म अरू वेद मन्त्र, आज हो रहे शेष॥४॥

भोजन कर एकान्त में, स्वच्छ पात्र स्थान।
''भँवर'' ग्रास से पूर्वकर, परमेश्वर का ध्यान॥५॥

नगर पथों का खोमचा, जिनके मन रूच जाय।
निर्मल बुद्धि स्वास्थ्य सुख, ''भँवर'' कहाँ से पाय॥६॥

अन्न कहावे देवता, राखो ऊँची ठौर।
जल रेखा चहुँ तरफ देय, तब लीजै मुख कौर॥७॥

अन्न अपावन धन हरे, हरे सकल सुख मान।
अन्न अपावन मौत है, जान सके तो जान॥८॥

नीन्द

प्रातः बैठा लिखन को, लेकर कलम दवात।
''भँवर'' किसी ने आ कहा, उठो हो गई रात॥१॥

''भँवर'' कभी ना हो सके, राम नीन्द एक ठाम।
जहाँ राम निद्रा नहीं, जहाँ नीन्द नहीं राम॥२॥

जा निद्रा उस द्वार पै, जहाँ पाप का वास।
''भँवर'' कहे पाहन हृदय, कभी न ऊगे घास॥३॥

निद्रा बेटी काल की, चतुर चेतना चोर।
तनिक प्रेम मत कीजिये, ''भँवर'' कहे कर जोर॥४॥

जो नर जाय विदेश में, लेता दिन भर नीन्द।
''भँवर'' कहे मत कीजिये, सुख धन की उम्मीद॥५॥

नीन्द लीजिये स्वान सम, आहट पा तज देत।
''भँवर'' विविध जग जीव से, क्यों नहीं शिक्षा लेत॥६॥

नीन्द स्वास्थ्य की मूल है, अति निद्रा दुःख देत।
रात नीन्द की गोद है, सकल जीव सुख लेत॥७॥

नींद कमाई ना करे, नीन्द करे नुकसान।
नींद मौत की बहन है, संतन करी पछान॥८॥

मत जाओ

बिना बुलाये क्यों गया, हुआ तेरा अपमान।
''भँवर'' कहे मन मूढ़ तूँ, अब भी तज अज्ञान॥१॥

''भँवर'' कहे उस सेठ ने, किया न मुख से राम।
शायद मन में सोचता, मांगन आया दाम॥२॥

भाल बीच सलवट पड़े, नैन लेत जो फेर।
''भँवर'' वहाँ मत जाइये, चाहे होय कुबेर॥३॥

जिन घर होवे राड़ नित्य, और जहाँ व्यभिचार।
''भँवर'' अगर तूँ जायेगा, आवे मान बिगार॥४॥

भूतकाल की त्रूटियाँ, ढूँढ़ निकाले आज।
''भँवर'' हमें भावे नहीं, ऐसा क्षुद्र समाज॥५॥

''भँवर'' जहाँ सत्संग हो, प्रेम मिलन सत्कार।
बिना बुलाये जाईये, चाहे जग इन्कार॥६॥

प्रेम छलकता नैन में, आदर, उर सद्भाव।
शीश झुका तहँ जाइये, ''भँवर'' कहे जहँ चाव॥७॥

''भँवर'' वहाँ मत जाइये, जहँ नहीं धर्म लकीर।
धर्म परायण देश में, डोले मस्त फकीर॥८॥

भारत

शस्य श्यामला भूमि पर, गङ्गा यमुना नीर।
"भँवर" कहे भारत महा, राम-कृष्ण से बीर॥१॥

भारत भूमि उर्वरा, शशि सूरज उपजाय।
"भँवर" तपै ना गगन में, अन्तःकरण में जाय॥२॥

नदियों का तांता लगा, हरियाली लहराय।
"भँवर" कृषक की रागिनी, गन्धर्व सुनते आय॥३॥

पुरवईया वायु चले, सघन वृक्ष लहराय।
"भँवर" इन्द्र हर्षित हुआ, भारत भू पर आय॥४॥

"भँवर" जगत को दे रहा, हिमालय उपदेश।
उच्च होय शीतल बनो, जय-जय भारत देश॥५॥

हे सृष्टि के रचयिता, पुनः जन्म यदि होय।
भारत भू पर जो चहो, बना भेजिये मोय॥६॥

नारायण ब्रह्मा मनु, ऋषि-मुनि देव महान।
भारत का परिचय यही, सुयश और सन्मान॥७॥

"भँवर" कहे भारत धरा, महापुरुष जन्माय।
सात द्वीप नव खण्ड में, भारत देश महाय॥८॥

वैराग्य

त्याग तुम्हारे बाप का, नाम सुना वैराग्य।
दादा पश्चाताप से, जगा तुम्हारा भाग्य॥१॥

"भँवर" बिना वैराग्य से, भक्ति कबहूँ न होय।
भक्ती नयनन से बहे, परख पड़ी अब मोय॥२॥

बैरागी से पूछ मत, कैसा है संसार।
"भँवर" हमें डर लग रहा, रो देगा वह यार॥३॥

भक्ति बिन वैराग्य के, "भँवर" कपुरी गन्ध।
परमेश्वर से मिलन का, हुआ नहीं प्रबन्ध॥४॥

भजन होम पूजन किया, व्रत भी किये संजोय।
"भँवर" कहे वैराग्य बिन, हरि दर्शन नहीं होय॥५॥

गृहस्थ धर्म पालन करे, मन में रखे वैराग्य।
"भँवर" जाय उस सन्त से, जो चाहे सो मांग॥६॥

जब आवे वैराग्य उर, तब उपजे बहु ज्ञान।
जैसे वर्षा पाय के, धरती देय सन्तान॥७॥

"भँवर" कहे वैराग्य बिन, मिले न मुक्ति मोक्ष।
जगत पछानो निज गुनो, हरि से नेह परोक्ष॥८॥

मृत्यु

मृत्यु है सुख की घड़ी, मिलती बाहें डाल।
"भँवर" आज नौबत बजी, भूला जग जंजाल॥१॥

मृत्यु तूँ सुख दायनी, भली मिली तूँ आय।
मोह-शोक-दुःख-रोग से, ले गई फन्द छुड़ाय॥२॥

जो मृत्यु से भय करे, सो मृत्यु के पास।
क्रुद्ध काल से ना डरे, "भँवर" राम के दास॥३॥

कितने साथी थे तेरे, कुटुम्ब और परिवार।
कहाँ गये? क्या है पता, अद्भुत यह संसार॥४॥

जब मृत्यु आती निकट, पूर्व दृश्य क्रम आत।
समय धूँध हट जाय सब, जीव सोच पछतात॥५॥

आगे की सुधि ले मना, व्यर्थ बजा मत गाल।
क्या जाने किस वक्त में, आय दबोचे काल॥६॥

मृत्यु ही एक सत्य है, और जगत सब झूठ।
जगत जीव से रूठ मत, "भँवर" मौत से रूठ॥७॥

जनम-मरण के क्लेश से, "भँवर" छुड़ावे राम।
प्रतिपल राम उच्चारिये, होकर मन निष्काम॥८॥

फैशन

फैशन महामारी चली, ग्रस्त सकल संसार।
"भँवर" धर्म की धज्जियाँ, उड़ती बीच बजार॥१॥

मानव मर्यादा तजी, नारी ने निज लाज।
घोर पतन के गर्त में, बैठा आज समाज॥२॥

सीता-सावित्री-सती, अध विकसित पद पाय।
पर नर संग नाचे खड़ी, सो तिय सभ्य कहाय॥३॥

आभूषण ऊपर टंगे, श्याम श्वेत पहनान।
सधवा-विधवा की यहाँ, "भँवर" नहीं पहचान॥४॥

चुस्त वसन में नग्नता, यौवनता झलकात।
"भँवर" कहे निर्लज्जता, फैशन ही कहलात॥५॥

धर्म कर्म की लालसा, ले बैठा शृँगार।
"भँवर" नई पीढ़ी बनी, जैसे रेत दीवार॥६॥

फैशन एक उन्माद है, देखा देखी रोग।
जीवन का यह जहर है, चहुँदिक् दीखे भोग॥७॥

मर्यादा लज्जा विदा, शील दिया नर खोय।
दुविधा भ्रम दुःख में फँसा, पछतावे अब रोय॥८॥

ऋण

शत्रु ऋण दोनों बुरे, जैसे कंकड़ नैन।
दिन भर भय चिन्ता रहे, नीन्द न आवे रैन॥१॥

ऋण लेकर नर बिक गया, ऋण दाता के हाथ।
"भँवर" बीच बाजार में, करे अकड़ कर बात॥२॥

"भँवर" आज भूखा रहूँ, लूँगा नहीं उधार।
जीवित ही मर जाऊँगा, अगर होय इन्कार॥३॥

दिवस कमावे आदमी, "भँवर" ब्याज दिन-रात।
ऋण बोझा मस्तक लदा, घटे नहीं बढ़ जात॥४॥

ब्याज सहित ऋण ढूँढ़कर, हमने दिया चुकोय।
मात-पिता-गुरु-राम से, "भँवर" उऋण नहीं होय॥५॥

मागूँगा रघुवीर से, जग क्या देगा मोय।
"भँवर" हमें कुछ डर नहीं, होनी हो सो होय॥६॥

"भँवर" कर्ज मत लीजिये, कर्ज दीजिये धोय।
जन्म-जन्म संग-संग चले, कर्ज चौगुना होय॥७॥

कर्ज चुकावे रोयकर, ब्याज देत सिर फोड़।
बालक पढ़े न घर चले, सूद कमर दी तोड़॥८॥

नम्रता

नारी के सौन्दर्य पर, जैसे जग झुक जाय।
"भँवर" पुरुष की नम्रता, सबको लेत लुभाय॥१॥

ज्यों-ज्यों ऊँचा पद मिले, त्यों-त्यों नम्र स्वभाव।
"भँवर" आम के वृक्ष ज्यों, कभी न उपजे ताव॥२॥

"भँवर" नम्रता मन्त्र है, सहनशीलता लाय।
सुर नर सब वश में हुए, महापुरुष पद पाय॥३॥

"भँवर" नम्रता से करो, मानव की पहचान।
जिनके मुख उर नम्रता, सो उत्तम नर जान॥४॥

मन मानस में कुटिलता, मुख पर नम्र सुभाव।
"भँवर" कहे अस दुष्ट का, कुछ दिन होत निभाव॥५॥

नहीं किसी से दोस्ती, नहीं किसी से बैर।
हम तो भूखे प्रेम के, अमृत हो या जहर॥६॥

हृदय विराजत नम्रता, मुख में शीतल बोल।
मधुर करे व्यवहार जो, जगत बढ़ावे मोल॥७॥

ओछे नर में बेरुखी, बड़ को नम्र स्वभाव।
बड़ा देत सन्मान हँस, छोट दिखावे ताव॥८॥

नीन्दा

नीन्दक मिलता भाग्य से, पूर्व पुण्य यदि होय।
बिन मजदूरी दाम बिन, मैल तुम्हारा धोय॥१॥

प्रशंशा कर जगत की, नीन्दा कीजै मोर।
"भँवर" कहे इस जन्म में, गुण भूलूँ नहीं तोर॥२॥

"भँवर" गुणी ऐसा बनो, नीन्दा करते यार।
उस नीन्दा को यह जगत, झूठी करे करार॥३॥

नीन्दा मुँह पर कीजिये, "भँवर" पीठ पर मान।
अगर पीठ नीन्दा करे, तो रख बन्द जबान॥४॥

नीन्दा कबहु न कीजिये, नीन्दा सम नहीं पाप।
दन्त जेल जिह्वा पड़ी, लगा किसी का श्राप॥५॥

लघु बड़ की नीन्दा करे, बड़ न करे एतराज।
"भँवर" स्वान भौकत फिरे, निर्भय है गजराज॥६॥

मात-पिता-गुरु-ईश की, नीन्दा मत कर यार।
"भँवर" लोक-परलोक में, पावें तूँ धिक्कार॥७॥

प्रशंसा नीन्दा बुरी, "भँवर" कहे सब सन्त।
जो सबकी नीन्दा करे, अति दुःख पावे अन्त॥८॥

शराब

चला शराबी पीय कर, गिरा टिका मुख कीच।
"भँवर" हँसे कुछ देखकर, गये कछुक कह नीच॥१॥

पीकर सोया पलंग पर, कटु विष ताज्य शराब।
"भँवर" मूढ़ खुश हो रहा, देख पतन का ख्वाब॥२॥

सुरा सुन्दरी की प्रथा, ज्यों-ज्यों हुई आबाद।
"भँवर" कहे त्यों-त्यों हुआ, महादेश बरबाद॥३॥

हरि चरणामृत छोड़कर, क्यों करता मद पान।
"भँवर" एक घर मोक्ष का, एक नरक की खान॥४॥

"भँवर" नशे की लत बुरी, तन-मन वश हो खाय।
लाख जतन छूटे नहीं, कुटुम्ब भले बिक जाय॥५॥

"भँवर" शराबी के हृदय, रहे दैत्य का वास।
सुख वैभव बल कीरति, कभी न आवे पास॥६॥

सुरा बुलावे सुन्दरी, यश बल बुद्धि नशाय।
"भँवर" कहे ऐसा पुरुष, जीवित मृत कहाय॥७॥

स्वस्थ पदारथ सड़ गया, मदिरा लई निचोड़।
ज्ञानी अज्ञानी बना, पीकर होड़म होड़॥८॥

नारी

नारी तूँ जननी मेरी, दिखलाया संसार।
खुद भूखी सोई अरी, हमको दिया अहार॥१॥

नारी तूँ जब-जब मिली, ले आँचल में प्यार।
"भँवर" कभी माता बनी, कभी बहन और नार॥२॥

जिस घर में रमणी तेरा, गृहलक्ष्मी सा मान।
"भँवर" बसे तहँ देवता, सो घर स्वर्ग समान॥३॥

नारी के अहसान से, दबा पड़ा संसार।
"भँवर" कहे हमने सुना, उऋण नहीं करतार॥४॥

नारी नीन्दा जो करे, सो नर नमक हराम।
"भँवर" कहे उस नीच का, इस जग में क्या काम॥५॥

नारी तूँ माया बनी, लीना रूप बिगार।
डूब गई सब साथ ले, "भँवर" नरक का द्वार॥६॥

नारी नर की रीढ़ है, नारी बिन घर सून।
नारी बिन नर शुष्क है, जैसे जल बिन चून॥७॥

नारी जग की लीक है, नारी जग की शान।
नारी बिन इस जगत में, नर की ना पहचान॥८॥

धोखा

जो नर तुमको आय के, कहे किसी का भेद।
''भँवर'' भेद मत दे तेरा, समझ लुढ़कती गेंद॥१॥

धोखा खावे सहज में, जिन संग तेरी प्रीत।
प्राण गवाँ बैठा हरिण, ''भँवर'' फँसा संगीत॥२॥

धोखा देकर मैं चला, पहुँचा अपने ग्रामं।
''भँवर'' सुना डाकू गये, लूट मेरा धन धाम॥३॥

मात-पिता-नारी-सखा, धर्म दीन गुरु देश।
इन संग घात न कीजिये, ''भँवर'' पाय यमं क्लेश॥४॥

बदले बन्धु मित्र सब, नारी पुत्र समेत।
दुर्दिन में निज देह भी, निश्चय धोखा देत॥५॥

जो तुमसे धोखा करे, खुद ही धोखा खाय।
''भँवर'' तुम्हें चीन्ता नहीं, करनी का फल पाय॥६॥

दगा सगा नहीं काहु का, कर देखो व्यवहार।
विष देकर विष ही मिले, जग पावे धिक्कार॥७॥

धोखा कबहुँ न कीजिये, धोखा करे कपूत।
कुल का मान घटाइके, खावे फिरि-फिरि जूत॥८॥

संगति

श्याम-गौर दोनों मिले, बढ़ा परस्पर प्यार।
"भँवर" रंग ना मिल सका, पर सब मिले विचार॥१॥

मानव को परखे यदि, प्रथम परख तिन मीत।
सज्जन दुर्जन की यहाँ, कभी न होवे प्रीत॥२॥

चोर खड़ा साहुकार संग, भ्रम उत्पन्न हो जाय।
कछुक दिवस संगति करे, दोनों चोर कहाय॥३॥

संगति ऐसी कीजिये, जीवन उन्नत होय।
"भँवर" कुसंगत जो करे, आखिर रोवे खोय॥४॥

"भँवर" सुसज्जन संग से, मानव बने महान।
जैसे धूल समीर में, मिले चढ़े असमान॥५॥

व्यसन कोटि हमको मिले, "भँवर" कुसंगति पाय।
अब जीवन भर पच मरु, शायद एक न जाय॥६॥

उत्तम संगति कीजिये, पारस चन्दन जोय।
मोल बढ़े सद्गुण चढ़े, जीवन सुखमय होय॥७॥

काले को गोरा मिला, चढ़ा न तन पर रंग।
दुर्गुण सद्गुण आ मिले, करो सयानी संग॥८॥

साधना

साधक करके साधना, दीन्हा मैल बुहार।
"भँवर" आत्म दर्शन हुए, लीन्हा जन्म सुधार॥१॥

जनता को उपदेश का, साधक को अधिकार।
"भँवर" कहे बिन साधना, लगे न एक ही बार॥२॥

बर्तन निशदिन मांजिये, मैल लगे न जंग।
"भँवर" कहे बिन साधना, व्यर्थ भये सब अंग॥३॥

साधन जिनको चाहिये, नहीं साधना होय।
"भँवर" कहे बिन बीज के, कैसे खेती बोय॥४॥

जिसने कीनी साधना, वश में सब संसार।
जो चाहे सो कर सके, बना प्रभु का हार॥५॥

अपने अवगुण ढूँढ़ के, प्रथम कीजिये शेष।
"भँवर" सफल कर साधना, फिर करना उपदेश॥६॥

साधन बड़ा कि साधना, ज्ञानी करो विचार।
डूबन को साधन बड़ा, करे साधना पार॥७॥

सबसे बड़ी है साधना, करत रहो दिन-रात।
साधन में नर क्यों फँसे, साधन में उत्पात॥८॥

चलचित्र

"भँवर" सिनेमा देखिये, अगर मिले उपदेश।
संयम चरित्र उदारता, हो न जाय कहीं शेष॥१॥

मनोरंजन की दृष्टि से, सफल हुए चलचित्र।
"भँवर" पतन में जा गिरे, अगर बनाये मित्र॥२॥

चलचित्रों से कीजिये, वैदिक धर्म प्रचार।
राम-राज्य स्थापना, होवे सब संसार॥३॥

नर-नारी का प्रेम ही, चित्रों का आधार।
अन्य प्रेम क्यों नहीं रूचे, निर्माता जलधार॥४॥

"भँवर" सिनेमा देख के, लगा मुहब्बत रोग।
स्वांग रचावे प्रेम का, दाग लगे कुल योग॥५॥

तुलसी राणा कर्ण से, ना उपजे इस बार।
"भँवर" कहे चलचित्र ही, होगा जिम्मेदार॥६॥

निर्माता धन लोभ में, करे राष्ट्र का नाश।
नेता को चिन्ता नहीं, वह भी धन का दास॥७॥

कला नहीं है नग्नता, कला नहीं सहवास।
नग्न पशू मैथुन करे, कला कहाँ तिन्ह पास॥८॥

मांसाहारी

मानव शुद्ध अन्न जल भखै, दानव मद और माँस।
"भँवर" एक पालन करे, दूसर करता नाश॥१॥

निर अपराधी जीव को, मार काट खा जाय।
उस पापी का पाप फल, वेद कहत सकुचाय॥२॥

"भँवर" पाँव काँटा गड़ा, पीड़ सहे नहीं कोय।
अगर छुरी गर्दन चले, तब क्या हालत होय॥३॥

परमेश्वर ने अन्न दिया, फिर क्यों काटे जीव।
"भँवर" मूढ़ तोहे घर मिला, अब क्यों खोदे नींव॥४॥

"भँवर" कहे सब जीव का, ईश्वर पालन हार।
काट-काट क्यों खा रहा, पापी बिन अधिकार॥५॥

रिद्धि-सिद्धि उन घर बसे, जिन घर हिंसा नाय।
"भँवर" कहे अनजान की, हिंसा माफी पाय॥६॥

थाली तो अरथी बनी, पेट बना श्मशान।
जठराग्नि में शव जले, प्रेत बना इन्सान॥७॥

मांस खाय मदिरा भखै, पर नारी का संग।
ऐसा मनुज पिशाच है, प्रगट पाप प्रति अंग॥८॥

रामजप

रे मन मूरख आलसी, कहूँ तोर अनुकूल।
"भँवर" कहे सब भूल जा, राम नाम मत भूल॥१॥

तुलसी सूर कबीर सम, निर्धन नर रैदास।
चमक रहे रवि चन्द्रज्यूँ, जब तक थल आकाश॥२॥

सेठ साह जमींदार नृप, बादशाह गये खोय।
"भँवर" बिना हरि नाम के, नाम अमर नहीं होय॥३॥

अन्य काम में समय है, राम भजन में नाय।
"भँवर" होश तब आयेगा, यम डंडा बरसाय॥४॥

मृग तृष्णा ऐसी लगी, दिन-दिन बढ़ती जाय।
"भँवर" मूढ़ ऐसा फँसा, जीवन दिया गँवाय॥५॥

जिस मुख में हरिं नाम है, सो मुख वेद पुराण।
"भँवर" राम जिस मुख नहीं, सो मल कुण्ड समान॥६॥

राम जपो भव ऊबरो, ऐहि ते सरल न पन्थ।
साक्षी वेद्ध-पुराण की, साख भरे सब सन्त॥७॥

राम नाम एक मंत्र है, अग्नि बीज कहलाय।
जपत रहो पल रात-दिन, पाप भस्म होय जाय॥८॥

चलचित्र

''भँवर'' सिनेमा ने किया, सबका सत्यानाश।
सब पर फैसन छा गई, आलस भोग विलास॥१॥

निर्माता धन लोभ में, किया न तनिक विचार।
''भँवर'' सिनेमा देख के, नष्ट हुआ संसार॥२॥

अर्धनग्न माँ बहन को, नचा रहे कुछ लोग।
आठ बरस के बाल को, सिखा दिया सम्भोग॥३॥

युवा बालिका बाल संग, पिता सिनेमा जाय।
''भँवर'' अकल कित जा बसी; हाय समझ नहीं आय॥४॥

बाप पठावे पढ़न को, पुत्र तके पर नार।
''भँवर'' सिनेमा से बढ़ा, अपहरण और बलत्कार॥५॥

''भँवर'' कहे फैशन बढ़ी, अर्धनग्न बहु नार।
जैसे वैश्या सँवर के, डोलत बीच बजार॥६॥

कला कहावे नग्नता, पाप कहावे प्यार।
पशु-मानुष दोनों सरिस, कौन करे उपचार॥७॥

नग्न दृश्य दिखलाय के, करे उत्तेजित देह।
शीलवती कन्या करे, पर पुरषन से नेह॥८।

इच्छा

इच्छा बिन नर आलसी, इच्छा देय उत्साह।
इच्छा से सृष्टि रची, "भँवर" बड़ी जग चाह॥१॥

अभिलाषा ऐसी करो, सब कह जगत हिताय।
"भँवर" कहे ऐसा मनुज, अजर-अमर पद पाय॥२॥

सुरसा के मुख की तरह, इच्छा बढ़-बढ़ जाय।
त्याग रूप हनुमान को, इच्छा सकी न खाय॥३॥

इच्छा कर्म बढ़ावती, इच्छा-बिन अन्धकार।
इच्छा उतनी कीजिये, ज्यों व्यंजन में खार॥४॥

इच्छा से इच्छा बढ़े, बढ़े रोग से रोग।
दुर्जन संग अवगुण बढ़े, बढ़े भोग से भोग॥५॥

प्रभु इतना ही दीजिये, भजन होय नहीं भंग।
परिजन को भोजन मिले, "भँवर" उड़े नहीं रंग॥६॥

इच्छा कबहुँ न घटत है, बढ़त रहत दिन-रात।
इच्छा कबहुँ न राखिये, इच्छा मारे लात॥७॥

जो इच्छा से रहित है, वह नर जग में भूप।
लघु इच्छा के कारने, पड़ा कबूतर कूप॥८॥

जीव हत्या

जो जीवों को मारता, उनको मारे जीव।
हरि को न्याय अचूक है, क्यों नर करे अतीव॥१॥

हत्या को हत्या मिले, रक्षा को रखवाल।
निष्ठुर को निष्ठुर मिले, पालक को जग पाल॥२॥

क्यों तड़फावे जीव को, हे निष्ठुर ईन्सान।
एक दिन ऐसा आयेगा, तूँ तड़फे नादान॥३॥

जीवों का पालक प्रभु, जीवों का वह बाप।
किस हक से तूँ मारता, करता अगणित पाप॥४॥

कहाँ मिला मूरगा तुझे, कहाँ खरीदा जाय।
ईश्वर को पैसा दिया, सच-सच सोच बताय॥५॥

ईश्वर मालिक जगत का, जगत पिता कहलाय।
जीवों का पालन करे, मार-मार तूँ खाय॥६॥

दुराशीष लेय जीव की, जावे जब परलोक।
लाख बार सूली चढ़े, सके न कोई रोक॥७॥

अल्लाह ने सबको दिया, जन्म और अधिकार।
क्यों उनकी हत्या करे, मूरख सोच विचार॥८॥

आहार

षट्रस भोजन मूल फल, दिये राम रच खाय।
फिर भी मारे जीव को, मूरख सोच बताय॥१॥

मार-मार मूरदा करे, मुर्दों को रहा खाय।
प्रेत सरिस जग में जीये, आखिर यमपुर जाय॥२॥

मांस भखे हड्डी चबे, करे रक्त को पान।
ऐसा पापी जगत में, भक्षक अवगुण खान॥३॥

बेल वृक्ष पौधे रचे, उपजाया फल अन्न।
फिर क्यों मारे जीव को, ईश्वर तुझ पर खिन्न॥४॥

अचल जीव अल्पायु के, ईश्वर दिये बनाय।
टूटे फल दाना गिरे, चुग-चुग कर तूँ खाय॥५॥

सात्विक भोजन कीजिये, उपजे सत्व विचार।
बल-बुद्धि-विद्या बढ़े, सहज मिले करतार॥६॥

पर दृष्टि भोजन पड़े, वह भोजन दुःखदाय।
भोजन कर ऐकान्त में, हरि कूँ भोग लगाय॥७॥

प्रथम अग्नि फिर गाय को, तब दीजै पथ स्वान।
"भँवर" अकेला खाय के, अति दुःखिया इन्सान॥८॥

माता-पिता

मात-पिता जब सबल थे, तब तक लोटा पाँव।
अब वे वृद्ध निरबल भये, कहता घर से जाव॥१॥

हे मूरख अब चेत जा, "भँवर" कहे समुझाय।
व्रत तीरथ विसराय के, मात-पिता को ध्याय॥२॥

जन्म देय पालन किया, विद्या ब्याह रचाय।
मात-पिता का ऋण बड़ा, कबहुँ न सके चुकाय॥३॥

पिता कमावे रात-दिन, सुत सुख की कर आश।
जब सुत सम्भला आयु ले, कुल को किया निराश॥४॥

जिसकी गोदी में पला, वह माता भइ दूर।
सुन्दर युवती पायकर, फर्ज किया सब धूर॥५॥

भूल गया उपकार सब, भूल गया कुल वंश।
रमणी संग उड़ता फिरे, भया पराया अंश॥६॥

मात-पिता को जो भजे, सो नर श्रेष्ठ सपूत।
जो उनको दुःखिया करे, सो जीवित जग भूत॥७॥

देव तुल्य माता-पिता, लीजै नित्य आशीष।
मात-पिता पद नत रहे, जनम लेय जगदीश॥८॥

बलि

घोर पाप कलि की प्रथा, कतहुँ न शास्त्र प्रमाण।
चेत-चेत पापी पुरुष, क्यों खावे यम वाण॥१॥

माता अपने पुत्र का, कबहुँ न खावे मांस।
क्रोधितं देवी प्रगट के, करे तुम्हारा नाश॥२॥

लक्ष्मण राम चुराय के, गया असुर पाताल।
जब बलि की बेला भई, हनुमत बन गये काल॥३॥

निरबल जीवों पर मनुज, करता अत्याचार।
देख रहा ईश्वर तुझे, सबका पालनहार॥४॥

अपनी बलि हँस दीजिये, दूसर की नहीं रोय।
जो देता बलि और की, मरे सदा बलि होय॥५॥

देवी सब करुणामयी, कबहुँ न खावे पूत।
सकल जीव की मात वह, वध से सदा अछूत॥६॥

निज स्वारथ के कारने, मार रहा तूँ जीव।
जन्म कोटि सुख चैन की, खोद लई खुद नींव॥७॥

तेरे सिर का मोल जो, बकरे का वही मोल।
दोनों में अल्लाह बसे, हाँ या ना मुख बोल॥८॥

अज्ञान

अज्ञानी को देखिये, काट रहा निज पाँव।
अज्ञानी सब दिक् मिले, नगरी हो चाहे गाँव॥१॥

महाकष्ट अज्ञान है, एहि क्षण करिये दूर।
ज्ञान पकड़ अज्ञान को, कर दे चकनाचूर॥२॥

बार-बार जन्मे मरे, जग अज्ञानी लोग।
खुद ही दुःख ढूँढ़त फिरे, सुख संग ना संजोग॥३॥

अज्ञानी को क्या पता, कहाँ भूख और प्यास।
जड़ होकर जग भंटकता, मन विषयन का दास॥४॥

हृदय तिमिर अज्ञान है, भटकावे दिन-रात।
ज्ञान सूर्य के उदय से, पावे सुख अज्ञात॥५॥

सुख की क्यों आशा करे, जब तक उर अज्ञान।
ज्ञान बिना भटके सदा, तनिक न पन्थ पछान॥६॥

अज्ञानी से दूर रह, कर देगा सुख नाश।
उसको कुछ सूझे नहीं, "भँवर" करे अरदास॥७॥

बार-बार जनमें मरे, प्रमुख हेतु अज्ञान।
चौरासी बन्धन कटे, लेकर ज्ञान कृपाण॥८॥

ज्ञान

ज्ञान भक्ति को कन्त है, ज्ञान कर्म को खेत।
ज्ञान पुत्र वैराग्य का, ज्ञान तिमिर हर लेत॥१॥

ज्ञानी ईश्वर को सखा, ज्ञानी से कर प्रीत।
लोक और परलोक में, जो तूँ चाहे जीत॥२॥

ज्ञान नहीं तो कछु नहीं, दीखे चहुँ अन्धकार।
खुद को खुद जाने नहीं, पावे कष्ट अपार॥३॥

ज्ञान बिना ईश्वर नहीं, ज्ञान बिना नहीं राह
ज्ञान बिना मुक्ति नहीं, ज्ञान बिना नहीं चाह॥४।

ज्ञान मिले गुरुदेव से, मौत मिले कर क्रोध।
दान मिले दातार से, हार मिले बिनु बोध॥५॥

ज्ञान सूर्य को सूर्य है, ज्ञान तत्व को सार।
ज्ञान बिना दीखे नहीं, मानस मैल विकार॥६॥

ज्ञान बिना संसार में, मानव अति दुःख पाय।
सुख साधन दीखे नहीं, फिरि-फिरि गोता खाय॥७॥

ज्ञान गुरु से लीजिये, तब पावे कल्याण।
जन्म-मरण बाधा मिटे, मिले सहज भगवान॥८॥

न्याय

तेरे तन काँटा चुभे, चीखे दर्द अपार।
छुरी चलावे जीव पर, कैसा न्याय विचार॥१॥

न्याय बिना शाषन नहीं, न्याय बिना नहीं साथ।
न्याय बिना अति जो करे, जगत फुड़ावे माथ॥२॥

न्याय सत्य सोइ जानिये, मिले आय तत्काल।
मिले जो न्याय विलम्ब से, सो सचमुच जंजाल॥३॥

न्याय न देरी कीजिये, दीजै सहित भरोश।
नहीं तो वह अन्याय सम, विधि दाता कर दोष॥४॥

न्याय जहाँ निरपक्ष है, रहिये तहँ दुःख पाय।
पक्षपात के न्याय से, गुण गरिमा घट जाय॥५॥

खुद संग करता न्याय नर, पर संग अति अन्याय।
ऐसा नर मल कुण्ड में, गिरे कीट मिल खाय॥६॥

न्याय बिकाऊ है जहाँ, "भँवर" कलंकित देश।
असुर सरिस वह न्यायविद, देता सबको क्लेश॥७॥

जगत जीव को न्याय से, रखा मनुज क्यों दूर।
न्याय अकेला पा रहा, न्याय उड़ावे धूर॥८॥

मुक्ति

मुक्त होय संसार से, जन्म-मरण मिट जाय।
ईश भजन सत्कर्म से, पुनर्जन्म नहीं पाय॥१॥

आशक्ति बन्धन बना, यह बन्धन दुःखदाय।
इस बन्धन से मुक्त हो, फेर जन्म नहीं पाय॥२॥

धन परिजन तन से करे, आशक्ति नर मूढ़।
जब आवे वैराग्य उर, मुक्ति पथ आरूढ़॥३॥

बूँद मिली जब सिन्धु में, बूँद कहे नहीं कोय।
जीव मिले जब ईश में, मुक्त कहावे सोय॥४॥

सागर से जल बिछुड़ के, पड़ा नाम जल बूँद।
जीव बिछुड़ कर ईश से, बैठा आँखे मूँद॥५॥

प्रबल ज्ञान वैराग्य से, पद पावे निर्वान।
प्रभु की लौ में लौ मिले, वेद कथन यह जान॥६॥

जन्म लेन को फल कहाँ, सोचत ना इन्सान।
लख चौरासी योनि में, भटक रहा नादान॥७॥

मरे नहीं जन्में नहीं, वह मुक्ति कहलाय।
विषयन की तृष्णा तजो, रहो कमल जल नाय॥८॥

मोक्ष

जगत कमाई कीजिये, सबसे बड़ी परोक्ष।
"भँवर" कहे अनमोल धन, नाम कहावे मोक्ष॥१॥

बार-बार जन्में मरे, सिसक-सिसक दुःख पाय।
फिर भी ना सम्भले डरे, फिर-फिर गोता खाय॥२॥

मोक्ष मिले भव ऊबरे, पुनर्जन्म नहीं होय।
"भँवर" कहे ऐसा मनुज, जग में मिले न जोय॥३॥

धन पाया नारी मिली, मिला नहीं उद्धार।
ऐसे मूरख मनुज को, बार-बार धिक्कार॥४॥

"भँवर" मनुज वह धन्य है, जो पावे निरवान।
जग माया का जाल है, जगत महा दुःख खान॥५॥

जिसने प्रभु को पा लिया, अब कुछ बचा न शेष।
"भँवर" पछाड़ा सहज में, पकड़ काल का केश॥६॥

जल बिन्दु को सिन्धु में मिले "भँवर" प्रवेश।
सागर की पदवी मिली, चीन्ता रहित हमेश॥७॥

नश्वर वस्तु जगत की, आवे और चल जात।
नाशवान से प्रेम क्यों, "भँवर" बता यह बात॥८॥

ईश्वर-प्राप्ति

त्याग-ज्ञान-वैराग्य से, ईश्वर मिले न शंक।
अतिशय पूण्य प्रताप से, भूप कहावे रंक॥१॥

ईश्वर प्राप्ति सहज में, जग का मोह विसार।
इत-उत जित देखे खड़ा, दीखे वह करतार॥२॥

कौन कहे ईश्वर नहीं, मिले नहीं कह कौन।
मनुज रूप वाचाल में, बैठा ईश्वर मौन॥३॥

मैंने ईश्वर पा लिया, "भँवर" कहे नत शीश।
बहुत काल जग में फिरा, मैं भी बनकर कीश॥४॥

अगणित सन्त हुए यहाँ, मिले हरि से आय।
अमर नाम उनका हुआ, कबहुँ न जग मिट पाय॥५॥

जिसने ईश्वर पा लिया, उसने किया कमाल।
"भँवर" जन्म का फल यही, कबहुँ न मारे काल॥६॥

तीन लोक का सुख मिला, मिला नहीं जगदीश।
"भँवर" कहे कंगाल तूँ, ले सन्तन आशीष॥७॥

ब्रह्म जीव जग एक है, मूरख कहता दोय।
मिले नहीं बिछुड़े नहीं, जागृत रहे न सोय॥८॥

परोपकार

परहित जैसा फल नहीं, पर पीड़ा सम दोष।
परहितकारी जगत में, रहे सदा खामोश॥१॥

तेरे पर उपकार से, ईश्वर होय प्रसन्न।
सुयश बढ़े चहुँ जगत में, बाँट वस्त्र-जल-अन्न॥२॥

जिस तन से अर्जन करे, वह तन तेरा नाय।
ईश्वर दिया विचार कर, जगहित तुरन्त लगाय॥३॥

जो कुछ तेरे पास है, ईश्वर दिया कमाय।
क्यों भ्रम में खुश हो रहा, अक्ल विवेक गँवाय॥४॥

मेह सन्त सरवर विटप, परहित प्रगटे आय।
तूँ भी हरि का पूत है, परहित कर दिखलाय॥५॥

पर उपकारी जगत में, पावे यश अधिकार।
"भँवर" मनुज के रूप में, समझो सिरजनहार॥६॥

जिसके मन में अहम् है, स्वार्थ-मोह-अज्ञान।
सो परहित नहीं कर सके, "भँवर" हमारी मान॥७॥

हे उपकारी निकट आ, पूजूँ तेरे पाँव।
जग दुखिया हरषित खड़े, पाकर तेरी छाँव॥८॥

प्राचीन-भारत

कौन कहे पाषाण युग, जड़मति का यह दोष।
नहीं जाने फिर भी कहे, "भँवर" गँवाया होश॥१॥

ब्रह्मा-विष्णु शिव सकल, "भँवर" भये अब गौण।
मधुर सरस इतिहास में, मिला रहे सब लौण॥२॥

सात द्वीप नव खण्ड में, भरत राज्य विख्याथ।
फिर भी पत्थर युग पड़ा, पत्थर नर के माथ॥३॥

नाम पड़ा मनु से मनुज, फिर भी ना पहचान।
जो हमको जंगली कहे, वे उजड़े इनसान॥४॥

स्वर्ण रचित लंका सुनी, रत्न जड़ित घर द्वार।
स्वर्ग लगाई सीढ़ियाँ, वह पत्थर युग यार॥५॥

बने हड़प्पा-जोदड़ो, भारत की पहचान।
"भँवर" अतिव मति हीनता, बूझ गँवाया ज्ञान॥६॥

पूर्वकाल बन्दर बने, मानव घिस-घिस पूँछ।
अब बन्दर नर ना बने, कहो मुड़ा कर मूँछ॥७॥

पहले बन्दर नर बने, अब क्यों नहीं संयोग।
"भँवर" कहे इतिहास को, लगा अकल का रोग॥८॥

विज्ञान

भारत का जो ज्ञान था, बना आज विज्ञान।
गूढ़ भेद यह ऊघरे, सब मिल करो पछान॥१॥

उष्ण-शीत-मेह-मौत से, हारा क्यों विज्ञान।
फिर भी दर्प दिखावता, कर-कर निज गुणगान॥२॥

अनावृष्टि अतिवृष्टि क्यों, क्यों भूकम्प डराय।
"भँवर" कहे विज्ञान यह, तनिक तरस नहीं खाय॥३॥

जो कहते विज्ञान बड़, अन्य छोट परिज्ञान।
उनकी नीन्दा मैं करूँ, "भँवर" समुझ अभिमान॥४॥

चमत्कार विज्ञान का, सबको लिया लुभाय।
"भँवर" बड़ाई मैं करूँ, अपनी सौगन्ध खाय॥५॥

बलिहारी विज्ञान की, जग को दिया जगाय।
सकल असम्भव वश किया, अचरज दिया दिखाय॥६॥

गूढ़ ज्ञान विज्ञान है, जो जड़ और चैतन्य।
एक दिखावे सूक्ष्म को, दूसर हरि को अन्य॥७॥

तत्व ज्ञान विज्ञान है, योगी जन की देन।
कछुक चुराकर ले गये, हमको कर बेचैन॥८॥

सूर्य

अर्घ दीजिये सूर्य को, समुझि प्रगट भगवान।
''भँवर'' कहे तिहुँ लोक में, रवि आलोक निधान॥१॥

रवि ईश्वर को रूप है, हरण करे अन्धकार।
अर्घ देय पूजन करो, विधिवत बारम्बार॥२॥

तीन लोक चौदह भुवन, सूर्य करत आलोक।
सप्त अश्व रथ चढ़ चले, सके न कोई रोक॥३॥

प्रगट देवता सूर्य है, प्रभा कन्त सुर राज।
इन्द्र भानु पूजन करे, सकल सुमंगल साज॥४॥

सूर्य आग का पिण्ड है, कहत अभागे लोग।
प्रगट शक्ति पर शक करे, यही अकल का रोग॥५॥

गोला है रवि आग का, बढ़त-घटत नहीं काह।
मन्द पड़े ना अति बढ़े, बरस द्वितीय दस माह॥६॥

सूर्य आग का पिण्ड है, कहत आज विज्ञान।
कौन गया पहुँचा वहाँ, व्यर्थ दिखावे ज्ञान॥७॥

सकल नखत ग्रह योग पर, शाषक सूर्य महान।
रवि की महिमा जो लखे, सो सब भाँति सुजान॥८॥

परलोक

निराकार सब लोक मे, पृथ्वी पर साकार।
जीवन ढूँढ़त सब थके, मिला न कछु आधार॥१॥

मनुज देह साकार है, निराकार तन और।
कहाँ प्रमाणित हो सके, जीवन तथ्य बटोर॥२॥

जितने तारे गगन में, उतने ही हैं लोक।
सूक्ष्म देह ऋषि मुनि गये, लिये लोक सब धोक॥३॥

मृत्यु काल इस जगत से, जीव जाय परलोक।
यह क्रम सबके साथ है, "भँवर" सके नहीं रोक॥४॥

"भँवर" चलो परलोक में, जहाँ मिलेंगे राम।
अन्तिम इच्छा है यही, फिर भी मैं निष्काम॥५॥

बिन दर्पण मुख देख ले, तब दीखे परलोक।
बिन अग्नि बिन तेल के, साग रहे सब छोंक॥६॥

सूक्ष्म देह परलोक में, पाप पूण्य फल पाय।
धर्मराज निर्णय करे, जीव खड़ा पछताय॥७॥

"भँवर" गया परलोक में, मिला नहीं भगवान।
भक्तन ढिंग हरि बैठि के, करे प्रेम रस पान॥८॥

चुनाव

बम फूटे गोली चले, सब कह आज चुनाव।
चहुँदिक् गुण्डा तन्त्र है, "भँवर" समझ नहीं आव॥१॥

वोट बिके मानुष बिके, बिके वोट परिणाम।
पद कुर्सी सब कुछ बिके, प्रजातन्त्र है नाम॥२॥

वोट पड़े स्वारथ लड़े, मरे दीन दुःखियार।
लाठी के वश भैंस है, चहुँदिक् हाहाकार॥३॥

सकल मूढ़ मिल वोट दे, किसका करे चुनाव।
परख बिना नेता नहीं, परख बिना नहीं राव॥४॥

धन्य-धन्य जनतन्त्र है, जहाँ सभी का राज।
स्वार्थ कुटिलता खोट से, शाषन हुआ अकाज॥५॥

वोट दीजिये विज्ञ को, जो सब भान्ति सुजान।
सेवा पालक दृढ़ व्रती, तनिक नहीं अभिमान॥६॥

भाषण सुना चुनाव का, एक सत्य सौ झूठ।
प्रजा बेचारी क्या करे, गया विधाता रूठ॥७॥

फूट डाल शाषन करे, धन हड़पे कर जोर।
रात भई उस देश में, "भँवर" निकट नहीं भोर॥८॥

पाप-पुण्य

दुष्ट कर्म फल पाप है, सन्त कर्म फल पूण्य।
पाप पूण्य को छोड़कर, अन्य जगत सब शून्य॥१॥

पाप बढ़ावे क्लेश को, पूण्य बढ़ावे चैन।
पापी नर हरदम दुःखी, जैसे कंकड़ नैन॥२॥

पापी नर मन सोचता, पाया धन सुख भोग।
बार-बार जनमें मरे, लेय चौरासी रोग॥३॥

लोक और परलोक में, पापी को गति नाय।
पापी के परिणाम को, काल कहत घबराय॥४॥

पूण्य करे सुरपुर मिले, भूख प्यास नहीं रोग।
चहुँदिक् नाचे अप्सरा, मिले विविध रस भोग॥५॥

प्रबल सुखी पुण्यात्मा, प्रबल दुःखी जहँ पाप।
नरक पड़े मल कूण्ड में, काटे बिच्छु साँप॥६॥

रे पापी तूँ चेत जा, आगे का कर ख्याल।
बार-बार यमलोक में, काल उधेड़े खाल॥७॥

धन्य-धन्य पुण्यात्मा, नमन करूँ शतबार।
"भँवर" लोक-परलोक में, चहुँदिक् जय-जयकार॥८॥

सेवा

सेवा से मेवा मिले, सेवा में भगवान।
''भँवर'' कहे सेवा बड़ी, सेवा कर इनसान॥१॥

स्वारथ की सेवा बुरी, बिन स्वारथ फल दाय।
फल की आशा छोड़ के, सेवा कर मन लाय॥२॥

सेवा से दुनिया सजे, सेवा ही सुख सार।
पशु सेवा नहीं जानता, सेवा घर करतार॥३॥

स्वारथ में सेवा नहीं, सेवा में नहीं स्वार्थ।
उनके हृदय हरि बसे, जिनके उर परमार्थ॥४॥

मात-पिता-गुरुदेव की, सेवा करो सुजान।
सेवा का फल मीठ है, वरनत वेद-पुरान॥५॥

सेवा से सद्गुण बढ़े, सद्गुण से यश नाम।
''भँवर'' कहे सेवा करो, सेवा ही सुख धाम॥६॥

सेवा कर तूँ जगत की, जगत करे गुणगान।
ऐसे नर को सब भजे, जो नर दया निधान॥७॥

जो निरबल विकलांग जग, दीन-हीन दुःखियार।
उनकी सेवा जो करे, चहुँदिक् जय-जयकार॥८॥

धर्म

धर्म कर्म का स्नान है, धर्म कर्म का मान।
धर्म कर्म का भूप है, धर्म जगत का प्रान॥१॥

प्राण त्यागना उचित है, धर्म त्याग मत यार।
धर्म बिना मानव नहीं, धर्म बिना अन्धकार॥२॥

जब तक शाषन धर्म का, रक्षित यह संसार।
धर्म गया सब कुछ गया, धर्म जगत का सार॥३॥

धर्म न्याय का रूप है, अनुचित-उचित बताय।
धर्म अवज्ञा जो करे, जीवन देत गँवाय॥४॥

धर्म नियम कर्त्तव्य है, धर्म कर्म शृँगार।
धर्म बढ़ावे एकता, धर्म करे उपकार॥५॥

हींसा में अधर्म है, पर दुःख में अन्याय।
धर्म मुखौटा पहन के, जग को रहे डराय॥६॥

धर्म मनुज का कवच है, धर्म जगत की ज्योत।
धर्म प्रेम व्यवहार है, धर्म शान्ति का स्रोत॥७॥

मनमानी करता मनुज, छोड़ी धर्म लकीर।
सन्त सिखावन पद तले, खुद ही अक्ल बजीर॥८॥

निराशा

उत्साही के सामने, खड़ी निराशा रोय।
उत्साही के जोर से, जो चाहे सो होय।।१।।

"भँवर" निराशा अति बुरी, मैं नहीं हुआ निराश।
लीन रहा संघर्ष में, लेकर ऊँची आश।।२।।

चींटी चढ़-चढ़ गिर पड़े, तबहुँ निराश न होय।
हाथी जैसा आदमी, बैठा कायर होय।।३।।

कायर नर इस जगत में, सब दिन रहत निराश।
शूरवीर नर बढ़ चले, करे दुःखों का नाश।।४।।

जिनके उर उत्साह है, उनका कर तूँ संग।
कभी न हारे जगत में, हार-जीत का जंग।।५।।

"भँवर" निराशा छोड़ दे, आशा दीप संजोय।
तेल डाल उत्साह का, कभी न बूझे लोय।।६।।

"भँवर" निराश न होईये, समझ निराशा मौत।
जीवन ही उत्साह है, जगत जगावे ज्योत।।७।।

"भँवर" निराशा रात है, निकट दूर नहीं दीख।
भ्रमित हृदय भटकत फिरे, जब तक मिले न सीख।।८।।

ईश भजन

जग में सब कुछ कर सके, जप न सके मुख राम।
"भँवर" कठिन यह कार्य है, जबकि राम सुख धाम॥१॥

भजन करो नर भाव से, झूठ कपट विसराय।
"भँवर" कहे कुछ भ्रम नहीं, ईश्वर मिलिहैं आय॥२॥

भजन बिना हे आदमी!, आया जग किस काम।
तूँ धरती का बोझ है, जपे न जब तक राम॥३॥

तूँ ईश्वर का पुत्र है, ईश्वर तेरा बाप।
भेजा था कह पूण्य कर, तूँ करता है पाप॥४॥

आया था हरि भजन को, लागा करन प्रपंच।
जीवन खोया खेल में, फिर भी रंज न रंच॥५॥

भजन करो भव से तरो, लेय-लेय हरि का नाम।
जन्म-मरण बन्धन कटे, मिले सदा बिश्राम॥६॥

धून्ध हटे संकट कटे, जपो राम का नाम।
असह्य रोग की औषधी, कौड़ी लगे न दाम॥७॥

ईश्वर के घर न्याय है, "भँवर" नहीं अन्धेर।
करनी का फल पायेगा, मानव साँझ सवेर॥८॥

आत्महत्या

''भँवर'' निराशा में मनुज, आत्मघात कर लेत।
जीवन जो अनमोल था, बना पलक में रेत॥१॥

आत्मघात अपराध है, आत्मघात एक पाप।
कायरता का चिह्न यह, मिथ्या तर्क प्रलाप॥२॥

आत्मघात नर जो करे, बने गाँव का भूत।
धर्मराज भी हार कर, कष्ट न पावे कूत॥३॥

कायर नर अफसोस कर, गले लगाई फाँस।
''भँवर'' कहे मूरख बना, व्यर्थ काल का ग्रास॥४॥

असह्य कष्ट नहीं सह सके, आत्मघात कर लेत।
मृत्यु बाद दुःख सौ गुना, मानव रो-रो झेत॥५॥

कायर नर घबराय के, करे पलायन रोय।
आत्महत्या जो करे, प्रेत होय दुःख ढोय॥६॥

मन मजबूती राख कर, हिम्मत से कर काम।
दुर्दिन भागे छोड़ कर, जपो हरि का नाम॥७॥

अपनी हत्या क्यों करे, रे मूरख इन्सान।
साहस रख आगे बढ़ो, मिले जगत में शान॥८॥

आधुनिकता

कुल मरयादा त्याग कर, मानव भया फकीर।
अब इज्जत सौरभ कहाँ, पत्थर बन गया हीर॥१॥

पशु अवारा ज्यों फिरे, वैसे फिरती नार।
ना अंकुश ना लाज भय, डूब रहा संसार॥२॥

आधुनीकता सिर चढ़ी, बजा रही पथ ढ़ोल।
सद्‌गुण को ताना कसे, कह-कह ओछे बोल॥३॥

सूर्य पुरातन चन्द्रमा, पृथ्वी अतिव पुरान।
सभी पुराने हम नये, कहते कुछ नादान॥४॥

अर्धनग्नता फैल कर, रिश्ते किये मलीन।
ना भाई ना बहन सुत, सब मन के आधीन॥५॥

आधुनीकता भूत है, सब पर हुआ सवार।
झाड़-फूँक निष्फल भई, चहुँदिक् हाहाकार॥६॥

"भँवर" विदेशी चाल ने, सबको किया कुचाल।
हंस पुरुष कागा बना, बैठ विदेशी डाल॥७॥

उजड़ों को उन्नत कहे, बिगड़ों को धनवान।
"भँवर" कहे इस देश में, नर की यह पहचान॥८॥

आधुनिकता

आँख कान नूतन नहीं, नूतन नहीं शरीर।
आधुनिक कैसे हुआ, बोलो अकल फकीर॥१॥

आधुनीकता सिर चढ़ी, लाज शरम सब खोय।
मानव भया दिवालिया, अब समझावे कोय॥२॥

मरयादा में जो रहे, वे नर बहुत पुरान।
"भँवर" शरारत सिर चढ़ी, हम ऊँचे इन्सान॥३॥

अर्धनग्न भौंड़े वसन, हम उन्नत ईन्सान।
ऐसी रचना सोच के, पछतावे भगवान॥४॥

मात-पिता जन्माय के, बैठे मुँह लटकाय।
सन्तानें उन्नत भई, घर-घर गोता खाय॥५॥

फूट डाल शाषन करो, यह बड़ धर्म हमार।
ना नेता शाषक यहाँ, ना जनहित सरकार॥६॥

नया रहत है आठ दिन, सौ दिन रहत पुरान।
सोना तो चमके सदा, पीतल लोह समान॥७॥

आधुनीक उन्माद है, अल्प काल का जोश।
दरपण लाय दिखाय दे, झटपट आवे होश॥८॥

भाषा

निज भाषा जो छोड़कर, परभाषा अपनाय।
मत करना विश्वास तुम, ऐसे नर पर जाय॥१॥

हिन्दी सिर बिन्दी धरो, राखो शीश चढ़ाय।
"भँवर" कहे इस हिन्द में, हिन्दी के गुण गांय॥२॥

सुरभाषा है संस्कृत, भारत की पहचान।
अमृत भाषा छोड़ इत, विष भाषा का मान॥३॥

भाषा सीख विदेश की, पहनावा निज त्याग।
भये आधुनिक हम सभी, हंस बना अब काग॥४॥

आये देश का ध्वज उड़ा, जग झुक करे प्रणाम।
रामायण गीता जहाँ, जहाँ कृष्ण और राम॥५॥

भाषा में सद्‌गुण बसे, रीति और रिवाज।
भाषा में है एकता, भाषा सिर का ताज॥६॥

अपनी भाषा में पढ़ो, गणित और विज्ञान।
राष्ट्र वही विकसित हुआ, जहँ भाषा का मान॥७॥

तीन टाँग की दौड़ में, दौड़ रहे हम लोग।
पर भाषा अपनाय के, लिया पराया रोग॥८॥

कला

कलाकार उस ईश ने, राखी कला बिखेर।
कला एक वरदान है, ईश्वर कला कुबेर॥१॥

कला बिना संसार में, मानव का नहीं मोल।
कला प्रभु की देन है, देत सदा अनतोल॥२॥

कला भेंट भगवान की, कला मनुज का मान।
कला हीन जीवन नहीं, "भँवर" करे गुणगान॥३॥

कला विकाऊ देखकर, लगा कला में दाग।
कला भ्रष्ट के वश हुई, नचा रहे कुछ काग॥४॥

चरित हीनता बढ़ रही, बढ़ा रहे कुछ लोग।
नग्न देह दिखलाय के, "भँवर" बढ़ाया भोग॥५॥

कला बनी अब नग्नता, कला बना व्यभिचार।
कला राष्ट्र का यश हरे, कैसी कला विचार॥६॥

जिस नर में राजत कला, सो नर जग विख्यात।
जगत बढ़ावे ऊपमा, चहुँदिक् आदर पात॥७॥

कला बिखेरे चन्द्रमा, कला स्वर्ग की शान।
कला रूप संसार का, कला सकल सुख खान॥८॥

मानव विनाश की ओर

दाँतों के बिच जीभ ज्यों, सावधान दिन-रात।
रहिये एहिविधि जगत में, "भँवर" तभी कुशलात॥१॥

"भँवर" खड़ा आकाश में, देखे जन कित जाय।
दौड़त सकल विनाश में, झूम-झूम हरषाय॥२॥

मैं बोलूँ मत जा उधर, पावे कष्ट अपार।
उपहासे सब लोग सुन, मुखड़ा लेत बिगार॥३॥

किसने देखा नरक को, किसने यम के दूत।
झूठी यह बकवास है, कह भारत के पूत॥४॥

पेट भरे ना पाप से, कर्म करो निष्पाप।
करो फिकर आशीष की, दूर हटाकर श्राप॥५॥

विश्व दौड़कर जा रहा, जहाँ प्रचण्ड विनाश।
खबर नहीं दुःख क्लेश की, सभी काल के ग्रास॥६॥

मानव चला विनाश में, आज प्रलय की ओर।
मना करे माने नहीं, नहीं किसी का जोर॥७॥

पाँव कुल्हाड़ी मार के, मानव करे विलाप।
यह बुद्धि का खेल है, नहीं किसी का श्राप॥८॥

विविध

क्षमा-दया-सद्भावना, जिनके हृदय अपार।
ऐसा नर भगवान है, देखा सोच-विचार॥१॥

इक्ष्वाकू दशरथ जनक, राम कृष्ण से वीर।
ऐसे उन्नत मनुज पर, फेंक रहे नर नीर॥२॥

हँसत है वह प्रेम से, रोता कर अफसोस।
इन दोनन के मध्य में, "भँवर" खड़ा निर्दोष॥३॥

"भँवर" कमाई हम करी, ईश्वर के गुण गाय।
खूटे ना अनुदिन बढ़े, चोर न सके चुराय॥४॥

चक्रवर्ति इस देश के, विजय किये संसार।
विश्व गुरु की ऊपमा, भारत का सत्कार॥५॥

मीठी-बोली सुखद है, कटु वाणी दुःखदाय।
सुख देकर सुख लीजिये, "भँवर" कहे समुझाय॥६॥

क्षमा भाव उर राखिये, क्षमा सिन्धु भगवान।
तूँ भी उनका पुत्र है, कर कुल गुण पहचान॥७॥

जगत जन्म तूँ क्यों लिया, सोच-सोच नादान।
कारण यदि पहचान ले, बन जावे भगवान॥८॥

विविध

मांस आहारे मद्य पिये, पर-नारी लिपटाय।
यह लंका का दृश्य है, आर्य असुर कहलाय॥१॥

सुखद शान्ति आध्यात्म में, भौतिकता में भोग।
भोग बढ़ावे रोग को, मानुष मरने जोग॥२॥

भौतिक उन्नति चाहिये, जितनी उचित कहाय।
रावण की भौतिक पुरी, हनुमत दई जलाय॥३॥

गाय दुग्ध मदिरा बनी, पान करे दिन-रैन।
पर नारी पत्नी बनी, रुपया ही सुख चैन॥४॥

शिक्षा की तूँ पूछ मत, शिक्षा अब व्यापार।
चेला रहा न गुरु रहा, चहुँदिक् भ्रम अँधियार॥५॥

जो चाहो सो लूट लो, कौन है रोकनहार।
थाना पुलिस हमार है, हमरी है सरकार॥६॥

बहन बेटियाँ नाचती, ताके खड़ा लंगूर।
चरित गया सब कुछ गया, माथे पड़ गई धूर॥७॥

रुपयों के आगे बिकी, इज्जत धर्म लकीर।
रुपयों में हाकिम बिका, रुपया देख फकीर॥८॥

विविध

तेरे घर आध्यात्म है, उनके घर जग भोग।
तेरे घर मुक्ति महा, उनके घर भव रोग॥१॥

पर देशन के होड़ में, देश करे बरबाद।
शिष्य रूप यदि गुरु चहे, यह कैसा अपवाद॥२॥

हरि भज निज कल्याण कर, करता रह सत्कर्म।
जगत सुखी हम भी सुखी, यह मानव का धर्म॥३॥

चिन्तन अशुभ विसार दे, शुभ चिन्तन उर धार।
शुभ ते अशुभ न होत है, अशुभ करे संहार॥४॥

उन्नति उन्नति सब कहे, उन्नति लखे न कोय।
धन को उन्नति जो कहे, सो जीवन भर रोय॥५॥

गूढ़ ज्ञान सरकस बना, धूमिल भये सब वेद।
आर्य पुरुष बालक बना, हाथ में लक्कड़ गेंद॥६॥

भौतिक उन्नति छोट है, आध्यात्मिक बड़ जान।
भौतिक लंका जारि के, लौटे श्री हनुमान॥७॥

इच्छा ऐसी राखिये, जो हरि पहँ ले जाय।
मुक्ति-मोक्ष ईश्वर मिले, फेर जन्म नहिं पाय॥८॥

विविध

जो नर जग में मुक्त है, सो नर ब्रह्म स्वरूप।
सुख-दुःख तन व्यापे नहीं, पद सिर नावे भूप॥१॥

हत्यारे की दुर्दशा, नरकन में कस होय।
यह सच्चाई पूछ मत, तूँ भी देगा रोय॥२॥

निरदोषी जग जीव को, जो मारे तड़फाय।
बार-बार जनमें मरे, छुरी कटारी खाय॥३॥

"भँवर" मार मत जीव को, मुझे मार हे मीत।
तूँ रोवे चौगान में, मैं गाऊँगा गीत॥४॥

जैसा भोजन कीजिये, वैसा ही गुण होय।
"भँवर" कहूँ मैं जाग कर, तूँ सुनता क्यों सोय॥५॥

पाँव तले चींटी मरी, किया त्रिविध उपवास।
"भँवर" पाप फिर भी रहा, करे राम ही नाश॥६॥

मेरी बिगड़ी जग हँसे, कौन करे निस्तार।
"भँवर" कहे अब पूछ मत, कैसा है तूँ यार॥७॥

मृत जीवन मिट्टी बना, तूँ कहे मोर आहार।
मानुष भया दिवालिया, बुद्धि गई विसार॥८॥

विविध

दस सिर रावण काटकर, शिव को दिये चढ़ाय।
तूँ अपना सिर काट के, देवी को दे जाय॥१॥

देवी अस देखी नहीं, जो निज कुल को खाय।
वह शठ भूखा मांस का, ओट लेत दुःखदाय॥२॥

खाल उधेड़े जीव की, बार-बार तड़फाय।
तूँ भी तड़फेगा यहाँ, लाख बार मेरे भाय॥३॥

बाहर शाषन मनुज का, अन्तर शाषन धर्म।
घर बाहर जंगल जहाँ, नेक करावे कर्म॥४॥

धर्म राज्य जब तक चले, रहे सुरक्षित लोग।
धर्म गया सब कुछ गया, मानव मरने जोग॥५॥

बैर भाव मत राखिये, बैर पराई आग।
शीतल जल ले प्रेम का, रमो परस्पर फाग॥६॥

बैर अग्नि में जल रहा, मानव मूढ़ गँवार।
क्षमा भाव जिनके हृदय, हरि उनका रखवार॥७॥

बैर करे नर एक से, दण्ड पाय परिवार।
उजड़े हरि के क्रोध से, तेरा सब संसार॥८॥

विविध

''भँवर'' गया बाजार में, लाया रोग बुहार।
यहाँ रोग की लालशा, कौन करे उपचार॥१॥

दया नहीं सेवा नहीं, नहीं दान हित भाव।
ऐसा मनुज पिशाच है, करे घाव में घाव॥२॥

रावण पाई सम्पदा, किया वंश का नाश।
सुयश कमाया राम ने, जो जग करे प्रकाश॥३॥

दाँतों के बिच जीभ ज्यों, सावधान दिन-रात।
रहिये एहि विधि जगत में, ''भँवर'' तभी कुशलात॥४॥

मानव की मनसा बुरी, यही उसी का नाश।
विष बोवे रोवे खड़ा, बना विषय का दास॥५॥

रुला रहा जग जीव को, हरा करे तिय शील।
एक दिन ऐसा आयेगा, नोच खाय तन चील॥६॥

पाप करे कछु ना डरे, लिये कूप बहु खोद।
चहुँदिक् निकट विनाश है, मूढ़ मनावे मोद॥७॥

मनमानी मत कर मना, देख रहा जगदीश।
क्रोध अग्नि में जल गया, दस मस्तक भुज बीस॥८॥

विविध

पाप-पुण्य के बोध से, विस्मृत यह संसार।
यह दुःख पन्थ विनाश का, सज्जन करो विचार॥१॥

निज दुःख से दुःखिया नहीं, पर सुख ही दुःख देत।
डाह अनल झुलसे खड़ा, मानव वंश समेत॥२॥

लूट-पाट चोरी करे, परधन हड़पे जाय।
लाख जन्म दुखिया बने, ऐसे नरकन माय॥३॥

जल्दी-जल्दी मत करो, जल्दी काज न होय।
समय पाय तरूवर फले, लाख जतन कर कोय॥४॥

चित्रगुप्त चित्त कोष में, कर्म लेख लिख लेत।
जैसी करनी जो करे, वैसा ही फल देत॥५॥

त्रिविध अवस्था देह की, जागृत-स्वप्न सुसुप्त।
क्रियाशील गतिवान मन, जगत रचावे गुप्त॥६॥

ज्ञान तत्व अति सूक्ष्म है, समझे विरला सन्त।
ज्ञान बिना दुःख क्लेश का, कभी न होवे अन्त॥७॥

साधन में लघु पतन है, उन्नति देत अभाव।
श्रम जीवन का सार है, आलस दुःख उपजाव॥८॥

गुरु वाणी

- जब बकरी को मारने में दया नहीं आइ[illegible] मनुष्य [illegible] मारने में दया क्यों आयेगी?
- दया के अभाव में मनुष्य निष्ठुर होता है [illegible]ष्ठुरता अप[illegible]ध को जन्म देती है और अपराधों से राष्ट्र असुरक्षित एवं दुःखी हो जाता है।
- जिस प्रकार बंजड़ जमीन पर पौधे नहीं उगते उसी तरह कठोर हृदय में दया उत्पन्न नहीं होती है।
- दयालु को दया, क्षमावान को क्षमा एवं न्याय करने वाले को न्याय ही प्राप्त होता है।
- जो व्यक्ति खुद के लिए न्याय चाहता है, और दूसरों पर अन्याय करता है, वह स्वार्थी और दुष्ट मनुष्य है।
- निर्दोष जीवों के जीवन को भोजन बनाना और दूसरों के जीवन को समाप्त करके अपने जीवन को सँवारना, यह आसुरी वृत्ति कहलाती है।
- परमात्मा पालनहार हैं, तुम भी पालन हार बनो क्योंकि तुम परमात्मा के पुत्र हो। अगर परमात्मा दयानिधान और न्याय प्रिय हैं, तो तुम परमात्मा से विरुद्ध क्यों हो रहे हो?
- सूअर, भगवान विष्णु के सूकर अवतार का प्रतीक चिह्न है, और मछली भगवान के मत्स्य अवतार का प्रतीक चिह्न हैं। क्या मनुष्य को उनकी हत्या करनी चाहिये ?॥